# ज्ञानामृत

सितम्बर, 1988
वर्ष 24 ❋ अंक 3
मूल्य 1.75

परमपिता परमात्मा शिव आह्वान कर रहे हैं कि दैहिक धर्म, जाति, रंग, भाषा आदि के भेदों को भूलो, स्नेही और सहयोगी बनो, नए सुखमय संसार बनाने में मददगार बनो।

विजयवाड़ा में 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम का शुभारम्भ वाई० एस० राजू, सिरीस कम्पनी, दादी प्रकाशमणि जी तथा अन्य मोमबत्ती जलाकर करते हुए।

भोपाल – मध्य प्रदेश के राज्यपाल महामहिम भ्राता के० एम० चांडी को पवित्रता की प्रतीक राखी बांधते हुए ब्र० कु० अवधेश बहन।

रायवगान (कलकत्ता) – पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री भ्राता ज्योति बसु को राखी बांधने के पश्चात् उन्हें पवित्रता के सागर 'शिवबाबा' का चित्र भेंट करते हुए ब्र० कु० विमला बहन तथा अन्य।

वलिंगटन (न्यूजीलैंड) – के मेयर भ्राता टेड वुल्फ को 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम से अवगत कराने के पश्चात् ब्र० कु० भावना तथा अन्य उनके साथ एक ग्रुप फोटो में।

बैंगलोर – भारत के भू० पू० उप राष्ट्रपति महामहिम बी० डी० जत्ती जी को स्नेह-सूचक राखी बांधते हुए ब्र० कु० हृदय पुष्पा जी।

**विजयवाड़ा** 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' योजना के अन्तर्गत आयोजित समारोह में मंच पर उपस्थित हैं (बाएं से) भ्राता नागभूषण जी, एम० एल० ए०, दादी प्रकाशमणि जी, लोक निर्माण मंत्री भ्राता जन रेड्डी तथा अन्य।

**शोलापुर** सेवाकेन्द्र पर महाराष्ट्र के बांधकाम मंत्री भ्राता विजय सिंह को राखी बांधते हुए ब्र० कु० सोमप्रभा बहन।

**कटक** – ब्र०कु० मंजु भ्राता पी०सी० मिश्रा, न्यायाधीश उड़ीसा उच्च न्यायालय को राखी बांधते हुए।

**जोधपुर** – महामहिम गजसिंह जी को ब्र०कु० निर्मला राखी बांधते हुए।

**ब्रह्मपुर-गांधी नगर** – राखी के पावन पर्व पर आयोजित 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' योजना के अन्तर्गत हुई कार्यशाला में भिन्न वर्गों के व्यक्तियों ने भाग लिया। राखी बंधवाने के पश्चात वे चित्र में दिखाई दे रहे हैं।

**फरीदाबाद** सेवाकेन्द्र पर ई० वि० वि० की सयुक्त प्रशासिका ब्र० कु० दादी चन्द्रमणि जी के आगमन पर स्वागत-गान प्रस्तुत करते हुए।

**बैंगलोर** – कर्नाटक विधानसभा के अध्यक्ष भ्राता बनाकर जी को पवित्रता की प्रतीक राखी बांधते हुए दादी हृदय पुष्पा जी।

**कलकत्ता** – पश्चिम बंगाल के राज्यपाल महामहिम डा० एस० नुरूल हसन जी को राखी बांधकर उन्हें 'आदि-देव' का परिचय देते हुए ब्र० कु० कानन बहन।

**रायदगान (कलकत्ता)** – केन्द्रीय अर्थ मंत्री भ्राता अजीत पंजा को स्नेह-सूचक राखी बांधते हुए ब्र० कु० विमला बहन।

**दुबई** सेवाकेन्द्र पर बच्चों के लिए 'चरित्र निर्माण शिक्षा' कार्यक्रम रखा गया। कार्यक्रम में पधारे बच्चों को दिव्य गुणों की व्याख्या देते हुए ब्र० कु० दयाल भाई।

## अमृत-सूची


| | | |
|---|---|---|
| १. | महत्त्वाकांक्षा (सम्पादकीय) | २ |
| २. | सहजयोग–कर्मयोग | ४ |
| ३. | नया सवेरा | ७ |
| ४. | सुनो, समझो, सोचो तब निर्णय करो | ९ |
| ५. | जन्माष्टमी मना रहे हैं हम (कविता) | १० |
| ६. | दृढ़ मनोबल | ११ |
| ७. | बच्चों को उपदेश दिया (गीत) | १२ |
| ८. | कर्मों पर ध्यान दो (कहानी) | १३ |
| ९. | आत्मिक चित्रिकरण | १५ |
| १०. | सत्यता | १५ |
| ११. | परमात्म-प्राप्ति का दिव्य अनुभव | १६ |
| १२. | भारत भूमि को स्वर्ग बनाओ (गीत) | १६ |
| १३. | सर्वगुण सम्पन्न थे श्रीकृष्ण! | १७ |
| १४. | अविनाशी प्राप्तियों का आधार–'ईश्वरीय प्यार' | १९ |
| १५. | ईश्वरीय आनन्द | २१ |
| १६. | अद्वितीय (कविता) | २२ |
| १७. | शुभ भावनाओं की शक्ति | २३ |
| १८. | ईश्वर बिन्दु स्वरूप ही क्यों? | २५ |
| १९. | राजयोगी बन मन, इन्द्रियों के राजा बनो | २६ |
| २०. | मायाजीत बनने का साधन – 'योगबल' | २७ |
| २१. | रक्षा बन्धन सेवा समाचार (सचित्र) | २९ |

**इन्दौर**–स्थानीय जिला जेल एवं सैन्ट्रल जेल में ब्रह्माकुमारी बहनों ने कैदियों को राखी बांधी, ब्र०कु० सुनीता कैदियों को राखी बांधते हुए।

**लखनऊ**–ब्र०कु० सती बहिन कैदियों को राखी बांधने से पूर्व शिव बाबा की स्मृति दिलाते हुए।

# महत्त्वाकांक्षा

कुछ व्यक्ति दूसरों के बारे में यह कहते हुए सुने जाते हैं कि वे 'महत्त्वाकांक्षी' हैं। जब वे ऐसा कह रहे होते हैं तब उनके मन में यही भाव होता है कि वे अपने ऐसे व्यक्तित्व के कारण संघर्ष के निमित्त बने हुए हैं। कैसा होता है महत्त्वाकांक्षी का स्वभाव जिससे कि समाज में अनबन, मन मुटाव और संघर्ष पैदा होता है!

जब कोई व्यक्ति यह चाहता है कि लोग उसे महत्त्व दें, उसके मूल्य को समझें, उसकी अवहेलना न करें, उसकी राय लें, उसका सम्मान करें, उसे आमन्त्रित करते रहें अथवा उसे पूछें... तब उसके विषय में कहा जाता है कि यह व्यक्ति महत्त्वाकांक्षी है।

आज संसार में यही हो रहा है कि प्रायः हरेक व्यक्ति की यह आकांक्षा है कि उसे महत्त्व दिया जाए, उसके कार्यों की प्रशंसा की जाए, उसकी राय की सराहना की जाए अथवा यह माना जाए कि वह किसी भी कार्य के लिए ज़रूरी क्यों है। अपनी इस आकांक्षा की पूर्त्ति के लिए वह प्रयास करता है। इस स्पर्धापूर्ण (Competitive) विश्व में हर व्यक्ति हर दूसरे से आगे निकलना चाहता है और अपने महत्त्व को जचाना चाहता है। जब राजनीतिक चुनाव लड़े जाते हैं, तब भी हर उम्मीदवार अपने लिए स्वयं भी कहता है कि मैंने अमुक-अमुक कार्य किया, मुझमें फलाँ-फलाँ योग्यता है और मैं दूसरे प्रत्याशी (Candidate) से बेहतर हूँ। इसलिए मेरी तरफ ध्यान दिया जाए; वोट मुझे दिया जाए। इस प्रकार वह अपनी प्रशंसा स्वयं करता है और इस बात की आकांशा करता है कि लोग दूसरे उम्मीदवारों की अपेक्षा उसको अधिक पात्र मानें। अपना ही महत्त्व बताकर दूसरों को पछाड़ता है, व स्वयं आगे बढ़ना चाहता है।

वर्तमान संसार में यह एक रिवाज-सा हो गया है कि हर कोई अपनी योग्यता की धाक दूसरों पर जमाना चाहता है और खटखटाकर यह बताना चाहता है कि 'मैं भी कोई कम नहीं हूँ'। इसी बात को लेकर कुर्सियों का खेल (Musical Chair Game) निरन्तर ही संसार में चल रहा है। संसार में जगह-जगह विभाजनवाद (divisionism), अलगाव (Separtism), अनेकत्व और मन-मुटाव पनप रहा है। ऐसा लगता है कि और वाद पीछे हटते जा रहे हैं और महत्त्वाकांक्षा वाद (पहले मैं)—यही एक वाद आगे आ रहा है। इससे परिवार, संस्थायें, देश खण्ड-खण्ड होते जा रहे हैं। जगह-जगह नारा एकता का लगाया जा रहा है लेकिन यदि हम मनुष्य के मन के भीतर झाँक कर देखें तो मालूम पड़ता है कि कोई स्वयं को किसी से भी कम नहीं समझता। हर कोई मान-शान, उपाधि, प्रशंसा और पद प्राप्त करने की दौड़ में हिस्सा ले रहा है। कुछ थोड़े ही ऐसे हैं जो ज्ञान-युक्त, योग-युक्त, त्यागी और तपस्वी एवं सन्तुष्टमणियाँ हैं। यह शिव बाबा ही का कमाल है कि उन्होंने आकर आत्माओं को ऐसा मालामाल किया है और रूहानियत का ऐसा ख़जाना दिया है कि कुछ आत्माओं की यह वृत्ति प्रायः सम्पूर्ण शान्त हो गई है। वे उस परमपिता परमात्मा पर न्योछावर हैं, एक उसी की महिमा के गीत गाते हैं और अतीन्द्रिय सुख से फूले नहीं समाते। उनकी बुद्धि रूपी तिजोरी शिव बाबा के अनमोल ख़जाने से ऐसी पुर हो गई है कि उसमें महत्त्वाकांक्षा का स्थान ही नहीं है। 'भगवान मिल गया, भगवान मिल गया... सखियो, मुझे भगवान मिल गया'— यही राग व यही झाँझ निरन्तर उनके मन में बजते रहते हैं। ऐसी थोड़ी-सी आत्माओं को छोड़कर विश्व-भर में महत्त्वाकांक्षा की आग-सी लगी हुई है।

महत्त्व प्राप्त करने के लिए मनुष्य कुछ भी करने को तैयार है। कई व्यक्ति तो ईश्वरीय ज्ञान लेने पर भी तथा अन्य बहुत-सी कमियों और कमजोरियां को मिटाने पर भी महत्त्वाकांक्षा की ज़ंजीरों से आज़ाद नहीं होते। वे ईश्वरीय ज्ञान व सहज राजयोग के आनन्द को पूरी तरह नहीं ले पाते और सदा भगवान के अंग-संग रहने की बजाय उनके मन में वही व्यक्ति बसे होते हैं जिनका स्थान वे लेना चाहते हैं अथवा जिन्हें पछाड़ कर वे आगे निकल जाना चाहते हैं अथवा जिनको वे उनके स्थान से वंचित करके वह स्थान दूसरा को देना चाहते हैं ताकि वह वंचित व्यक्ति उनके बराबर हो जाए। एक ओर उन्हें योग का आनन्द आकर्षित करता है और वे चाहते हैं कि योग में वे अपने मन को रमा कर इसका आनन्द लें। परन्तु दूसरी ओर उनकी महत्त्वाकांक्षा ऐसी हलचल मचाती है कि न उन्हें स्थिर रहने देना चाहती है, न दूसरों को ही हिलाए बिना रहती है।

शिव बाबा जो हमें शिक्षाएँ दे रहे हैं, वे ऐसी मधुर, गम्भीर, अनमोल और हर्षकारी हैं कि वास्तव में ज्ञानवान व्यक्ति का मन उससे ऐसा जुट जाना चाहिए कि वह दूसरी उपलब्धियों के पीछे जाना ही बन्द कर दे! परन्तु कभी-कभी दूसरों की ऐसी रीति-नीति देखकर कोई-कोई योग-प्रेमी भी क्षण-पल के लिए योग की मस्ती से नीचे उतरकर महत्त्वाकांक्षा रूपी मिट्टी के खिलौनों से खेलने लग जाते हैं!

जो ज्ञानी है, योगी है, दिव्य गुणधारी है, शिव बाबा का स्नेही है—उसका महत्त्व तो है ही। शिव बाबा ने स्वयं ही ब्रह्मा बाबा के श्रीमुख से कहा है कि वह करोड़ों में से चुना हुआ एक रत्न है और कि स्वयं त्रिकालदर्शी शिव बाबा ने उसका महत्त्व समझते हुए उसे चुना है। शिव बाबा ने बारम्बार यह भी कहा है कि हरेक योगी-वत्स 'विशेष आत्मा है, वह आधार मूर्त और उद्धार मूर्त है, वह इस सृष्टि रूपी ड्रामा का हीरो एक्टर (Hero Actor) है, वह अपनी तकदीर जगा कर आया है और दूसरों की तकदीर जगाने वाला है'.... फिर इसके बाद किन्हीं दूसरी आत्माओं द्वारा प्रशंसा होने की गुंजाइश ही कहाँ है? शिव बाबा का सर्टीफिकेट मिल जाने के बाद मनुष्यों के सर्टीफिकेट की ज़रूरत ही क्या है?

जो इस बात को नहीं समझते, वह कुछ भी नहीं समझते। परन्तु वे दूसरों को नहीं समझने देते— यह भी एक कमी और कमज़ोरी है और मन की एक टेढ़ी चाल है जिसको ठीक करने की ज़रूरत है।

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय ही ऐसी संस्था है जहाँ हज़ारों बहन-भाई उपरोक्त प्रदूषण से मुक्त हैं क्योंकि यहाँ यह शिक्षा दी जाती है कि हमें महत्त्व की आकांक्षा न करके महान बनना है, महत्त्वपूर्ण कार्य करने हैं और महात्माओं के विश्व का निर्माण करना है। हमें दूसरों का ध्यान अपनी ओर न खिंचवाकर सबका ध्यान परमपिता से जुटवाना है और इस संगम युग में हमें और किसी से प्रशंसा की इच्छा न करके अपने जीवन को शिव बाबा के द्वारा प्राप्त हुई शिक्षाओं के सांचे में ढालना चाहिए। इसके अलावा हमारे जीवन में किसी चीज़ की फुर्सत नहीं। त्याग, तपस्या, सेवा को छोड़कर और कोई आकांक्षा हमारी सूची (List) में ही नहीं है— यह धारणा पक्की कर लेने पर ही जीवन में महानता का रंग निखरता है, दिव्यता की सुगन्ध फैलती है व मन में हर्ष और उल्लास बढ़ते हैं।

जगदीश

**कुरुक्षेत्र**— अतिरिक्त जिला सत्र न्यायाधीश भ्राता डी०डी० यादव को राखी बांध कर उन्हें आत्मिक स्मृति का तिलक देते हुए ब्र० कु० सोनिया बहन।

**हल्द्वानी** में आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए भ्राता अब्दुल कवि जी

**हाथरस**— में आयोजित एक आध्यात्मिक समारोह में अलीगढ़ जनपद के न्यायाधीश को ईश्वरीय साहित्य भेंट करते हुए ब्र० कु० सीता बहन।

**भुवनेश्वर**— सेवाकेन्द्र के भाई-बहनों को राजयोग की गहन अनुभूति कराते हुए ब्र० कु० सुरज भाई।

# सहज योग – कर्म योग

ब्र० कु० सूर्य, आबू पर्वत

**प्रश्न – मेरा जीवन बहुत व्यस्त है, मुझे अनेक काम करने पड़ते हैं। मैं चाहता हूँ कि मेरा जीवन योग-युक्त बने, परन्तु कार्य की अधिकता सफल नहीं होने देती, मैं क्या करूँ?**

**उत्तर** – मनोवैज्ञानिकों ने 'काम' व 'खेल' की परिभाषाओं में अन्तर बताया है। 'काम' वह है जो हमें करना पड़ता है और 'खेल' वह है जो हम खुशी से करते हैं। बस अगर कार्य को खेल बना दिया जाए तो हमारे कार्य सहज हो जाएँ।

एक समर्पित कुमार का ऐसा ही जीवन था। रात-दिन स्टेशन पर तथा हवाई अड्डे पर जाना पड़ता था। कहता था – बहुत व्यस्त हूँ, क्या करूँ? उसे युक्ति बताई गई कि जब भी कहीं जाओ, उससे पूर्व एक, दो या तीन मिनट बाबा के कमरे में योग करके जाओ और बीच में रिक्शा या कार में बैठे हुए भी इधर-उधर न देखकर, योग-अभ्यास ही करो और उसने यही किया। इस प्रकार प्रतिदिन उसका १० बार बाबा के कमरे में जाना हुआ। उसने अपने अनुभव इस प्रकार सुनाये :–

"अब स्टेशन पर आरक्षण के काम सहज हो गये, बाबू लोग प्यार से व सम्मान से कार्य करने लगे, जैसे कि मेरी इन्तज़ार ही करते रहते हों। सब कार्य मानो स्वतः ही होने लगे। यह थी करन-करावनहार परमपिता की कमाल। इस प्रकार मेरा जीवन एक मास में ही आनन्द से भर गया। मानसिक व शारीरिक थकान, चिड़चिड़ापन सब समाप्त हो गये।"

पहले जब मैं रात्रि देर से आता था, तो भोजन नहीं होता था या ठन्डा मिलता था तो गुस्सा आता था। परन्तु अब मन इतना प्रसन्न रहने लगा कि जो भी मिलता है, उसी में आनन्द अनुभव होता है।

हवाई अड्डे तक जाने-आने में २ घण्टे लगते हैं। अब मैंने इन दो घण्टों को तपस्या का समय समझ लिया, इसलिए अब मुझे ऐसा लगता ही नहीं कि मैं योग मिस करता हूँ। इसी सम्बन्ध में मैं अपने एक अनुभव का वर्णन करना चाहता हूँ। ऐसे तो मैं प्रायः अकेला ही हवाई अड्डे पर किसी को लेने जाया करता था, और जब आता था, तो थकान महसूस होती थी। एक दिन कोई दूसरा व्यक्ति हवाई अड्डे पर जा रहा था। उसने मुझे कहा – 'चलो मेरे साथ' और मैं घूमने के संकल्प से उसके साथ चल दिया। दो घण्टे में जब हम लौटे तो मैं अपने को बहुत फ्रैश व खुशी में अनुभव कर रहा था।

अब मेरा विचार चला कि इस तरह जब मैं किसी को लेने जाता हूँ तो २ – ३ घण्टों में बहुत थकान महसूस करता हूँ और आज २ – ३ घण्टे में मैं स्वयं को बहुत फ्रैश अनुभव कर रहा हूँ। तो मेरी समझ में आया कि रोज़ मैं इसे काम समझता था और आज मैंने इसे घूमने जाना समझा। तो स्मृति के अन्तर से अनुभवों में अन्तर हो गया।

इस प्रकार यदि प्रत्येक कर्म से पूर्व हम थोड़ा भी योग-युक्त होने का अभ्यास करें और कर्म को सहज भाव से खेल की तरह करें तो व्यस्त जीवन भी खेल हो जाए और योग-युक्त स्थिति भी सहज बन जाए।

**प्रश्न – मैं एक गृहस्थ में रहने वाली माता हूँ। पाँच वर्ष से योग-अभ्यास कर रही हूँ। मेरे परिवार के सभी सदस्य ज्ञान-मार्ग पर चल रहे हैं। सभी का पूर्ण सहयोग है। मैं चाहती हूँ कि मेरे घर का वातावरण शक्तिशाली बने। मैं क्या विधि अपनाऊं?**

**उत्तर** – आप तो पद्मापद्म भाग्यशाली हैं जो सारा परिवार दैवी परिवार है। आप स्वयं घर की मालिक भी हैं। कुछ सुझाव हैं और कइयों ने इन्हें अपना कर घर के वातावरण को श्रेष्ठ बनाया है। आप भी दृढ़ता से इनका पालन करें।

- सवेरे उठकर सभी एक साथ बैठकर योग करें।
- सारा घर का कार्य आपको ही करना होता है तो भिन्न-भिन्न कार्य शुरू करने से पूर्व दो-दो मिनट योग करें।
- हर घण्टे ईश्वरीय प्यार में मग्न करने वाला एक गीत बजायें।
- अपने घर के कुछ नियम अवश्य बनायें क्योंकि अब आपका घर मन्दिर है। और घर में आने वाले मेहमान भी उन नियमों का पालन करें।
- भोजन का भोग अवश्य लगायें।
- शाम को या रात्रि को सोने से पूर्व किसी भी समय सभी साथ बैठकर मुरली पढ़कर उस पर चर्चा करें।

• सोने से पूर्व सभी इकट्ठा बैठकर १५ मिनट योग करें।

इसके अतिरिक्त आप हफ्ते में एक दिन अपनी व्यक्तिगत भट्ठी अवश्य करें। उसमें हल्का भोजन हो, कम बोलना हो, हो सके तो मौन व्रत हो, पढ़ना-लिखना व योग-अभ्यास शामिल हो। इसमें यदि पूरा परिवार सहयोग दे तो अति उत्तम। इससे घर का वातावरण योग-युक्त व शक्तिशाली बनेगा।

**प्रश्न – मैं एक डाक्टर हूँ। मेरे पास ३० – ४० मरीज़ प्रतिदिन आते हैं। दिनचर्या बड़ी ही व्यस्त रहती है, मन भी थक जाता है और तन भी। योग में सन्तुष्टता नहीं होती। क्या मेरे लिए कोई सरल तरीका है?**

**उत्तर** – जब भी कोई बीमार व्यक्ति आपके सामने आता है, सर्वप्रथम आप उसे आत्मा देखो। शरीर को चेक करते हुए आत्मा की स्मृति रखना सरल कार्य है।

दूसरे जब आप उनसे बीमारी के बारे में पूछते हैं तो अपना सम्बन्ध एक बार ऊपर सर्वोच्च सर्जन से जोड़ो और उनसे पूछो कि इसे क्या दिया जाए। इससे आपका योग भी होता रहेगा और आपकी दवाई भी अधिक प्रभावशाली होगी और आपको अपनी दिनचर्या खेल जैसी भी लगेगी।

इसके अतिरिक्त अपने मन को ज्ञान से भरपूर रखने के लिए प्रतिदिन एक अव्यक्त मुरली अवश्य पढ़नी है।

**प्रश्न – मैं एक कुमार हूँ। मेरा पिछला जीवन काफी गन्दा रहा, मैंने कई अनैतिक काम किये। मेरा योग नहीं लगता, अपवित्र सकंल्प बहुत परेशान करते हैं। मन निराशा से भरा हुआ सारा दिन उदास रहता है। कहीं भी मन नहीं लगता। न मैं किसी को कुछ बता सकता हूँ। क्या मेरा जीवन भी खुशियों से भर सकता है, आप तरीका बतायें, यहाँ तक कि मैं कोई सज़ा भोगने को भी तैयार हूँ।**

**उत्तर** – यह कलियुग का अन्त है और कलियुग का प्रभाव हरेक मनुष्य पर सम्पूर्ण रूप से छाया हुआ है। उसमें भी सबसे अधिक है – काम का दुष्प्रभाव। इसलिए जो कुछ भी आपने किया वह अज्ञानवश था, उसे अब भूल जाओ। उसका चिन्तन करके मन को भारी करने से अब कोई लाभ नहीं।

हाँ, अब यदि आपको नव-जीवन चाहिए तो कुछ कठिन व्रत अपनाने ही पड़ेंगे। भले ही राजयोग का मार्ग सरल है, इसमें हठयोग को कहीं भी स्थान नहीं है। तो भी कड़ी बीमारी से मुक्त होने के लिए कुछ कड़वा उपचार तो लेना ही होगा।

**प्रथम बात होगी** – भोजन हल्का करना। उसमें भी ६ मास तक आप प्रातः एक समय भोजन खायें व रात्रि के समय फल व दूध। इससे आप अमृतवेले के समय का आनन्द ले पायेंगे व अपवित्रता का प्रकोप समाप्त हो जाएगा। भारी भोजन पवित्रता के लिए कठिनाई पैदा करने वाला है।

**दूसरी बात** – प्रति दिन एक अव्यक्त मुरली पढ़कर उसका सार लिखो। यदि एक बार में सफलता न मिले तो दोबारा पढ़कर १० लाइनों में उसका सार लिखो। इससे आपकी मनन शक्ति बढ़ेगी और आपका स्वचिन्तन चलेगा। क्योंकि श्रेष्ठ पुरुषार्थ के लिए एकान्त में स्वचिन्तन आवश्यक है। बिना स्वचिन्तन के श्रेष्ठ प्रेरणाएँ प्राप्त नहीं होती।

**तीसरी बात** – अमृतवेले व रात्रि योग के अतिरिक्त प्रति घण्टा ३ मिनट योग अवश्य करना है।

**चौथी बात** – हफ्ते में या १५ दिन में एक दिन अपनी व्यक्तिगत योग भट्ठी अवश्य करनी है। उस दिन घर से दूर कहीं एकान्त स्थान में चले जाओ और स्वयं की स्वयं ही भट्ठी करो।

**पांचवी बात** – रोज प्रातः भगवान् से की गई पवित्रता की प्रतिज्ञा को याद करो और उसे दृढ़ करो और स्वयं के पवित्रता के बल को स्मरण करते हुए इस स्मृति में आ जाओ कि "मैं इस धरा पर पवित्रता का सूर्य हूँ, मेरी किरणों से माया के समस्त कीटाणु नष्ट होते हैं।

इस प्रकार की तपस्या करने से आपका मन पूर्णतया निर्मल, शक्तिशाली व आनन्दित हो जाएगा।

**प्रश्न – बाबा हमेशा कहते हैं – स्वदर्शन-चक्रधारी बनो तो माया समाप्त हो जाएगी। परन्तु इसमें कुछ रस नहीं आता। तो हमें बताइये हम कैसे स्वदर्शन-चक्र के सुन्दर अनुभव करें?**

**उत्तर** – स्वदर्शन-चक्र घुमाना, योग-अभ्यास का एक महत्वपूर्ण अंग है। स्वदर्शन-चक्र निःसन्देह आसुरी वृत्तियों के गले काटकर हमें माया-मुक्त कर देता है। परन्तु स्वदर्शन-चक्र घुमाने का यथार्थ स्वरूप हमारे मन में स्पष्ट होना चाहिए। ईश्वरीय महावाक्यों में हम अनेक रहस्य इस सम्बन्ध में सुनते आये हैं जिनसे यह स्पष्ट है कि स्वदर्शन-चक्र घुमाने का अर्थ केवल ८४ जन्मों के ज्ञान को रिपीट करना (दोहराना) नहीं है।

जहाँ 'स्वदर्शन-चक्र' का अर्थ है "सृष्टि-चक्र में आत्मा का ज्ञान", वहीं इस शब्द का अर्थ "सृष्टि-चक्र में आत्मा के विभिन्न स्वरूपों का दर्शन करना" भी है। योगी अपने तीसरे दिव्य नेत्र से सृष्टि-चक्र में आत्मा के सम्पूर्ण पार्ट को एक फिल्म की तरह देखता है।

स्वदर्शन-चक्र का अभ्यास वास्तव में अशरीरीपन के

सुन्दर अनुभव कराता है। हम ऐसा अनुभव करते हैं कि आत्मा रूपी धागा ८३ शरीर रूपी मणकों को पार करता हुआ अब यहाँ आ गया है। साथ-साथ इसके अभ्यास से आत्मा अपने श्रेष्ठ स्वमान में भी स्थित हो जाती है।

अव्यक्त महावाक्यों में हमने सुना कि स्वदर्शन-चक्रधारी होने का अर्थ है—हर बात के राज़ को जानना व उसके नशे में स्थित हो जाना। तो आओ, हम इन दो बातों के द्वारा स्वदर्शन- चक्रधारी होने का अभ्यास करें। सम्पूर्ण स्वदर्शन-चक्र को हम ५ भागों में बाँट लेते हैं।

**प्रथम**—हम यह राज़ जानते हैं कि हम आत्माएं, इस धरा पर आने से पूर्व परमधाम में थे और हमें अपने घर का नशा भी रहता है। यह राज़ व नशा अन्य किसी भी मनुष्य को प्राप्त नहीं। अपने घर के राज़ को जानने के कारण इस संसार को हम अपना घर नहीं समझते, बल्कि हमें यह याद रहता है कि यहाँ तो हम खिलाड़ी हैं.....घर का नशा हमें स्वीट साइलेंस (मधुर शान्ति) का अनुभव कराता है।

तो हम, आत्मा होकर कुछ क्षणों के लिए बुद्धि रूपी विमान पर सवार हो परमधाम में जाकर बैठ जाएँ।

**दूसरा**—फिर, हमें यह राज़ मालूम है कि सृष्टि के आदि में हम सम्पूर्ण पावन व सर्वगुण सम्पन्न देवी देवता थे और यही हमें नशा भी रहता है कि जिनकी मन्दिरों में पूजा हो रही है, वे हमारे ही आदि स्वरूप हैं। यह राज़ व नशा हमें सम्पूर्ण पावन बनने की हिम्मत व प्रेरणा देता है। इस राज़ को जानकर ही तो हम देवत्व की ओर चलने के लिए राजयोग के अनुगामी बन गये और हमारी हीन भावनाएँ समाप्त हो गईं।

तो अब हम परमधाम से नीचे उतर कर अपने आदि दिव्य स्वरूप का दर्शन करें .....मानो कि मैं आत्मा परमधाम से उतर कर एक दिव्य शरीर में प्रविष्ट हो गई जिससे चारों ओर दिव्य अलौकिक प्रकाश फैल रहा है।

**तीसरा**—इसके बाद, सृष्टि चक्र में हमने अनेक जन्म लिये, अनेक मुख्य पार्ट बजाये। इस प्रकार हमें यह राज़ मालूम है कि यह विश्व एक विशाल नाटक है और हम इसके मुख्य पार्टधारी हैं और यही हमें नशा भी रहता है। ड्रामा के राज़ को जानकर हम निश्चिन्त हो गये व इसे खेल समझ कर हम इसका आनन्द लेने लगे। हमारी परेशानियाँ व भारीपन नष्ट हो गये।

तो हम सारा दिन, इस विश्व को एक नाटक की तरह देखने का अभ्यास करें—कैसा सुन्दर खेल है यह, कितने पार्टधारी हैं, इसमें सब एक दूसरे से भिन्न है! इस प्रकार विश्व-नाटक को आदि से अन्त तक एक फिल्म की तरह देखने का अभ्यास करें।

**चौथा**—अब हम चक्कर लगाते-लगाते संगमयुग पर पहुँच गये। संगमयुग का राज व इसका सम्पूर्ण नशा—दोनों ही हमें भली-भाँति ज्ञात हैं। हमें पता भी नहीं था कि ऐसा संगमयुग भी आयेगा जब भगवान् हमारे सामने होगा और हम अपनी मूल स्थिति की ओर यात्रा करेंगे। हम स्वयं के व दूसरों के भाग्य का निर्माण करेंगे, भगवान् स्वयं बैठकर हमें पढ़ायेंगे आदि आदि!

इस प्रकार हम संगमयुग की श्रेष्ठ प्राप्तियों के नशे में स्थित हो जाएँ।

**पाँचवा**—अब हमें यह राज़ भी मालूम हो गया है कि अब हम आत्माओं का वापिस परमधाम जाने का समय समीप है। ये विशाल विश्व अब विनाश की ज्वाला में प्रवेश करने वाला है। इसलिए हमें अब घर चलने का नशा भी चढ़ चुका है, हमें हमारा प्यारा शान्तिधाम खींच रहा है। यह नशा हमें इस पुरानी दुनिया से उपराम रखता है, मन में वैराग्य के बीज बोता है और हम चारों ओर से स्वयं को समेट लेते हैं। हमें नशा है कि स्वयं भगवान् खिवैया बन कर हमें लेने आया है।

तो अब हम इस स्वरूप का दिव्य चक्षु से दर्शन करें कि मैं आत्मा इस शरीर को छोड़कर परमपिता के साथ वापिस परमधाम जा रही हूँ।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि सृष्टि-चक्र के विभिन्न रहस्यों को जानकर उनके नशे में स्थित होना और क्रियात्मक रूप में उसके लाभ का, उसके आनन्द का व उसकी प्राप्तियों का अनुभव करना ही स्वदर्शन-चक्र घुमाना है।

जालन्धर— करतारपुर लायन्स क्लब में आयोजित एक कार्यक्रम में ब्र० कु० कृष्णा बहन प्रवचन करते हुए।

# नया सवेरा

सुधीर ने देखा कि कोई नया आदमी उसकी कुर्सी पर बैठा उसकी फाइलों पर कुछ लिखे जा रहा है।

सुधीर हज़ार यत्न करने पर भी कभी अपने कार्यालय में समय पर नहीं पहुँच पाता था। दफ्तर वाले साथी 'आलसी' और 'निकम्मा' कह कर स्वीकार किए जा रहे थे उसे। लेकिन नए अफसर ने आकर कुछ नया ही परिवर्तन कर डाला।

"जी आप ?"– प्रश्न वाचक दृष्टि डालते हुए सूरज से पूछा सुधीर ने।

"आइए, सुधीर बाबू। मेरा नाम सूरज है। आप कई दिनों से छुट्टी पर थे और इधर कुछ फाइलें अर्जेन्ट देनी थीं, इसी कारण थोड़ा काम देख रहा था।"

"लेकिन जनाब आप हैं कौन?" सुधीर ने सीधा प्रश्न दागा।

"अरे यह तो मैं बताना ही भूल गया।"

तभी साथ वाली सीट से उठकर नरेश बाबू ने आकर कहा– "भई सुधीर जी, ये हमारे नए साहब हैं, दो दिन पहले आए थे। पहले साहब का ट्राँस्फर हो गया है।"

"ओह! क्षमा कीजिए सर।" सुधीर ने गिड़गिड़ाते हुए क्षमा माँगी।

सूरज ने सीट से उठते हुए सुधीर का हाथ अपने हाथों में लेकर कहा– "यह आप क्या कर रहे हैं सुधीर जी.... इसमें क्षमा की बात कहां से आ गई भई आप में और मेरे में अन्तर ही क्या है.... थोड़ा-बहुत, बड़ा-छोटा पद ही तो है। वैसे तो हम भाई-भाई ही हैं।"

सुधीर का दिल भर आया। कई वर्ष से वह इस कार्यालय में काम कर रहा है लेकिन उसे 'निकम्मा', 'आलसी' और 'नालायक' के सिवाए कुछ भी तो नहीं समझा गया। लेकिन यह नया अफसर सचमुच कोई आत्मीय है। पहली बार किसी ने उसे 'प्यार' और 'सम्मान' से पुकारा है। पहली बार किसी ने उसे अपना साथी समझा है।

"क्या सोच रहे हो सुधीर जी?" सूरज ने उसे चुपचाप खड़े देखकर कहा।"

"कुछ नहीं सर।"

"मैं 'सर' नहीं हूँ, मेरा नाम सूरज है। आप मेरे नाम से ही बुलाइए मुझे।" मुस्कराते हुए सूरज ने कहा।

"फिर भी आप बड़े तो हैं ही। सर आप हमारे बॉस हैं।"

"भई, कोई पद से बड़ा-छोटा नहीं होता..... बड़ाई-छोटाई तो हमारे कर्म और व्यवहार से जानी जाती है।"

सुधीर को लगा जैसे उसका अफसर न होकर कोई सन्त-महात्मा उसके सामने खड़ा है जो उसे सही मार्ग दिखाने आया है। सूरज अपने कमरे में चला गया और सुधीर ने अपनी सीट पर बैठ कर अपना काम देखना शुरू किया। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि पिछले कई दिनों का काम निपटा दिया गया था। सुधीर को अपने जीवन में एक नई प्रकाश किरण प्रवेश करती-सी अनुभव हुई। थोड़ी-सी खुशी, थोड़ा साहस, थोड़ा धैर्य, थोड़ा-सा सुख अनुभव होने लगा था उसे।

शाम पाँच बजते-बजते समस्त आफिस खाली हो गया। दो ही प्राणी रह गए थे–नया सूरज और पुराना सुधीर। सुधीर एक ही दिन में अपने कार्य को निपटाकर सिद्ध कर देना चाहता था कि वह 'निकम्मा' और 'आलसी' नहीं है, अपितु एक 'योग्य' और 'चुस्त' व्यक्ति है।

सुधीर को काम करते देखकर सूरज धीरे से अपने कमरे से निकला और एक कप चाय सूरज ने उसकी टेबल पर रख दी।

"अरे आप सर!"–खड़े होते हुए सुधीर ने आश्चर्य से सूरज को देखा।

"देखो सुधीर..... हम दोनों सगे भाई हैं..... यह 'सर-सर' क्या लगा रखा है तुमने।"

"आप मेरे सगे भाई..... क्या कह रहे हैं आप ?"

"मैं ठीक कह रहा हूँ। अच्छा, पहले आप चाय पीजिए। बातें तो बाद में भी होती रहेंगी..... लेकिन पीने से पहले कुछ क्षण उस बाप को याद अवश्य कर लीजिए जिसके हम दोनों हैं..... यानि सगे भाई..... परमपिता परमात्मा को।"

सूरज मुस्कराते हुए अपने कमरे में चला गया।

सुधीर ने परमात्मा को हाथ जोड़कर याद किया और चाय पी ली।

"मे आई कम इन, सर?" दरवाजा खोलते हुए सुधीर ने भीतर प्रवेश की आज्ञा माँगी।

"आओ सुधीर, चाय पी ली?"

"जी सर।"।

आज सुधीर पहली बार अपने बॉस के सामने दोस्तों की तरह हँस रहा था। कहीं-कहीं अपने छोटे क्लर्क होने का आभास भी उसमें खटकता, लेकिन सूरज के व्यवहार से वह अत्यन्त प्रसन्न था।

"गुस्ताखी माफ़ सर..... आपका पूरा नाम क्या है?"

"बी० के० सूरज।"

सुधीर पूछना चाहता था कि यह बी० के० क्या होता है? पर वह एक ही साथ दो प्रश्न करने का साहस नहीं जुटा पा रहा था।

"सुधीर, तुम अब यह पूछना चाहते हो कि बी० के० क्या होता है?"

"आप क्या मेरे मन की हर बात जान लेते हैं?"

"मैं ही नहीं, तुम भी जान सकते हो..... और हाँ..... आप भी बी० के० बन सकते हो।"

"सर..... आप मुझे तुम कहते हो तो बहुत अच्छा लगता है..... 'आप' कहकर मुझे अपने से दूर मत कीजिए।"

"भई आप भी तो 'सर-सर' करके मुझे याद दिला रहे हो कि मैं तुम्हारा अफसर हूँ।"

"वह तो हैं ही आप हमारे अफसर सर। संकोच होता है बिना सर के बोलना।"

"अच्छा, आज नहीं तो कल तुम समझ लोगे।"

"सर,आप ने बताया नहीं बी० के० का क्या मतलब है?"

"बस, जो परमात्मा को पहचान कर उसका बन जाए, वही बी० के०।"

"क्या मतलब, मैं समझा नहीं सर?"

"तुमने सुना है परमात्मा के गुण क्या हैं?"

"जी सर! एक तो यही गुण है जो आप में है..... यानि वह प्रेम का सागर है।"

"वाह सुधीर! तुमने तो कमाल कर दिया। बस, वही जो प्रेम के सागर को जान ले, पहचान ले और उसी अनुसार आचरण करे उसे ही 'बी० के०' कहते हैं। यानि जो परमात्मा के प्रेम में बिक जाए असली बी० के० उसे ही कहते हैं। क्या तुम बिकना चाहते हो?"

"हाँ, सर,मुझे भी बेच दीजिए उसके हाथों। मैं बहुत ही 'नालायक' और 'निकम्मा' हूँ।" कहते-कहते वह सूरज के चरणों पर गिर पड़ा। उसकी आंखो से अश्रु-धारा बह निकली।

सूरज ने सुधीर को उठाया, उसे गले से लगाया और धीरे-धीरे उसकी पीठ सहलाता रहा। सुधीर अपने होश खो बैठा ..... उसे अनन्त सुख की अनुभूति हो रही थी..... आज जीवन में पहली बार।

होश आने पर उसने पाया कि वह अपने अफसर की गोद में सिर टिकाए था।

"सुधीर परमात्मा का एक गुण और बता दो"—सूरज ने पूछा।

"शान्ति का सागर है वह ।"

"वाह, सुधीर! तुम तो सचमुच बी० के० बन गए हो। बस, दो ही बातें याद रखो..... वह शान्ति का सागर है, प्रेम का सागर है और हम उसके प्रेम में बिक गए हैं। फिर हम प्रतिज्ञा करें कि उसकी बनाई सृष्टि से प्यार करेंगे, शान्त रहेंगे और दूसरों को शान्ति का दान दें, चाहे वह पत्नी हो या बच्चे।"

"सर.....।" आश्चर्य से आँखे फाड़-फाड़ कर देखने लगा था सुधीर सूरज को। जैसे वह सचमुच सूरज है और उसकी जिन्दगी में नया सवेरा बनकर उदय हुआ है।

"तो आप यह भी जानते हैं कि मैं पत्नी और बच्चों को बहुत परेशान करता हूँ। लेकिन आज से मैं सौगन्ध लेता हूँ उस परममिता परमात्मा की कि मैं किसी को परेशान नहीं करूँगा।'

"बस तुम प्रतिज्ञा करो, उस पर चलो तो वह परमपिता तुम्हें अपना बना लेगा और तुम उसके बच्चे अर्थात् उसकी अलौकिक सम्पत्ति (प्रेम, शान्ति, आनन्द, आदि) के वारिस बन जाओगे तो आप बी० के० ही कहलाओगे।"

"सर! आखिर आपको यह ज्ञान कहाँ से मिला?"

"ईश्वरीय विश्वविद्यालय से।"

"ईश्वरीय विश्वविद्यालय.....! ईश्वर के भी विश्वविद्यालय होते हैं?"

"हाँ, सारी सृष्टि का मालिक जो ठहरा वह! वह छोटा-सा विद्यालय तो नहीं खोलेगा!"

"बात तो आपकी ठीक है लेकिन इसकी जानकारी मुझे नहीं है..... सबको जाना चाहिए ऐसे विश्वविद्यालय में।"

"पर कोटों में से कोई उसको जानता है और उसमें भी कोई उस पर आचरण करता है—यही विधि का विधान है। 'मैं' और 'तुम' सौभाग्यशाली हैं कि हमें उसने अपना लिया है। दुनिया आपसी कलह-कलेश में फँसी है। वही उसे शरण दिखाएगा लेकिन बहुत देर हो चुकी होगी उस वक्त। धर्मराज हमसे हिसाब माँगेगा और पूछेगा—क्या तुमने परमात्मा को पहचाना था..... जो जानबूझ कर भी नहीं बने तो उनको तो हिसाब देना ही पड़ेगा।

आज से मैं तुम्हें परमात्मा के हवाले करता हूँ, सुधीर। वही तुम्हारे बिगड़े काम बनाएगा। सब उसी पर छोड़ दो। आज से तुम ईश्वरीय विश्वविद्यालय में नियमित जाना शुरू कर दो।"

कुछ ही दिनों में सुधीर का जीवन बदल गया। दफ्तर के साथी, पत्नी, बच्चे सब आश्चर्य करते थे उनके परिवर्तन को देखकर। कहाँ डाँट-फटकार, थप्पड़, लात, घूसे चलते थे घर में और अब प्यार, शान्ति, सब जगह स्वर्ग लग रहा था सुधीर को।

कुछ समय बाद सूरज का तबादला हो गया और सुधीर का उसी अफसर की जगह प्रमोशन (पदोन्नति) हो गया। सुधीर ने कहा—"हे परमपिता! सचमुच .... तू सब के काम बनाने वाला है..... तू ही जीवन का नया सवेरा है.....।"

**वीना शर्मा, त्रिनगर, दिल्ली**

# सुनो, समझो, सोचो तब निर्णय करो

ब्रह्माकुमारी सुधा, शक्ति नगर, दिल्ली

एक बार की बात है कि इस ईश्वरीय विश्वविद्यालय के एक हितैषी व्यक्ति ने अपने किसी मित्र को यह शुभ परामर्श दिया कि वह ईश्वरीय विश्वविद्यालय में जाकर विधिवत ईश्वरीय ज्ञान का कोर्स करे तथा सहज राजयोग के अभ्यास की जानकारी प्राप्त कर सच्ची शान्ति का लाभ ले। वह व्यक्ति भक्त स्वभाव का था। प्रभु-चर्चा में उन्हें रूचि थी। व्यापार में व्यस्त रहने के बावजूद भी उसे सतसंग और ज्ञान-चर्चा अच्छे लगते थे। अतः अपने मित्र की उस बात को स्वीकार करते हुए वह ईश्वरीय विश्वविद्यालय के निकटवर्ती केन्द्र पर उसके पाठ्यक्रम के लिए गया। पहले दिन जब उन्होंने देह व देही, क्षेत्र व क्षेत्रज्ञ अथवा आत्मा और शरीर—इन दो अलग सत्ताओं के विषय में चर्चा सुनी तो उनके मन को ऐसा महसूस हुआ कि सचमुच मनुष्य की यह भूल ही है कि वह अपने को देह मान लेता है जबकि वह एक अनादि अविनाशी ज्योति बिन्दु आत्मा है। यह चर्चा अच्छी लगने के कारण उन्होंने उस बहन को कहा कि यह ज्ञान-योग-पथ प्रदर्शनी नामक चित्रावली की एक प्रति उन्हें उपलब्ध करा दी जाए ताकि मैं अवकाश के समय उसका घर पर अध्ययन कर सकूँ।

ज्ञान-योग-पथ-प्रदर्शनी नामक पुस्तिका किसी को प्रायः कोर्स कराने के बाद ही दी जाती है परन्तु उन महोदय की ज्ञान में रूचि देखकर और उसके अध्ययन की उनके मन में कामना देखकर उन्हें उस चित्रावली की एक प्रति दिलवा दी गई। वह व्यक्ति अगले दिन अपने निश्चित समय पर आने का इरादा बताते हुए चले गये।

दूसरे दिन वह महोदय अपने समय पर आए ही नहीं। उस बहन ने समझा कि शायद कोई आवश्यक कार्य हो गया होगा जिसके कारण वह नहीं आ पाये होंगे परन्तु साथ-साथ उसे यह भी ख्याल आता रहा कि यदि कोई आवश्यक कार्य पड़ गया होता तो संभवतः वह व्यक्ति फोन द्वारा सूचना दे देते क्योंकि वे शिष्ट व विचारवान स्वभाव के हैं। परन्तु उनका टेलीफोन भी नहीं आया। न जाने वे किस कारण से नहीं आये। खैर, समय निकल गया और साथ-साथ यह बहन भी अपने कार्य में व्यस्त हो गई। परन्तु निश्चित समय के लगभग आधे घण्टे के बाद वो महानुभाव केन्द्र पा आ गए। अवश्य ही उनका विचार चलता रहा होगा कि मैं समय निश्चित करके आया हूँ, अतः आज तो मुझे जाना ही चाहिए। परन्तु कुछ समय पहले तक उनकी इस शुभ चेष्टा को रोकने वाला भी कोई संकल्प रहा होगा। बहन ने सोचा कि अब जबकि वह आ गये हैं तो यह तो वे स्वयं ही बतायेंगे।

वह महोदय जब बैठ गये तो पहले-पहल उन्होंने यही कहा कि देर हो गई, क्षमा कीजिए। उस बहन ने कहा कि कोई बात नहीं। इसके बाद अध्ययन शृंखला की अगली कड़ी शुरू हुई और उन्हें परमपिता परमात्मा के विषय में परिचय दिया गया। उसे सुनकर वे और अधिक प्रसन्न हुए और उन्हें महसूस हुआ कि ये नई बातें हैं और श्रवण तथा मनन के योग्य हैं।

इस दिन के पाठ्यक्रम के अन्त में उन्होंने स्वतः ही अपने मन के भावों को स्पष्ट करते हुए कहा—"बहन जी, कल मैं जो आपसे ज्ञान-योग-पथ-प्रदर्शनी नामक पुस्तिका ले गया था, उसके मैंने कई पृष्ठ पढ़े। मुझे यह पुस्तिका अच्छी लगी। इसमें ईश्वरीय ज्ञान के कई पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। परन्तु जब इसको पढ़ते-पढ़ते मेरी निगाह इस पृष्ठ पर पड़ी जिसमें यह बताया गया था कि 'गीता के भगवान अथवा गीता-ज्ञान-दाता परमपिता ज्योतिस्वरूप शिव हैं, न कि 16 कला सम्पूर्ण श्री कृष्ण' तो मेरे मन को यह मन्तव्य नहीं सुहाया। कृष्ण-भक्त होने के कारण श्री कृष्ण के प्रति मेरी विशेष श्रद्धा-भावना है और मैं चिरकाल से यही मानता आया हूँ कि श्री कृष्ण ने ही गीता-ज्ञान दिया था। परन्तु अब यह जो नई बात लिखी थी, इसको पढ़कर मेरा मन उखड़ गया और मैंने सोचा कि अब मैं इस कोर्स को नहीं करूँगा। मन में यह संकल्प होने के कारण मैं देर से तैयार हुआ परन्तु फिर भी मेरे मन में यह विचार चलता रहा कि इस बात को पढ़कर न जाना, ठीक नहीं, बल्कि मुझे चाहिए कि जाकर मैं इस बात का स्पष्टीकरण प्राप्त करूँ। ऐसे लगा कि स्पष्टीकरण करने से पहले ही निर्णय ले लेना ठीक नहीं। जिन्होंने यह बात लिखी है, उन्होंने भी तो कुछ सोच-समझ कर लिखी होगी, अतः उनसे यह पूछना चाहिए। बहन जी, इन्हीं विचारों के ताने-बाने के कारण मुझे देर हो गई। परन्तु आखिर निर्णय करके मैं आ ही पहुँचा।"

उनकी इस बात को सुनकर मेरे मन में यह विचार आया कि इस छोटी-सी बात से भी कितना अन्तर पड़ जाता है!

संसार में कितने ही लोग ऐसे हैं जो पुरानी प्रचलित मान्यताओं को शत-प्रतिशत ठीक मानकर चलते रहते हैं। वे किसी नई बात को सुनने के लिए तैयार ही नहीं होते बल्कि यदि उन्हें उस विषय पर चर्चा करने के लिए निमन्त्रण दें तो वे अपनी कट्टरवादिता के कारण उसे भी अस्वीकार कर देते हैं। परन्तु यह करना उन्हीं के लिए ही तो हानिकारक होता है क्योंकि वे दूसरे पक्ष को सुनने और समझने से वंचित रह जाते हैं। संसार में बहुत-थोड़े ही लोग ऐसे होते हैं जो सत्य को जानने के प्रयोजन से हठधर्मी को छोड़कर दोनों पक्षों को सुनने के बाद ही निर्णय करते हैं और वे यह न देखकर कि संसार में अधिक लोग किस बात को मानते हैं, यह देखते हैं कि सत्य किस ओर है।

सुनकर निर्णय करने व सुनने से पहले निर्णय करने में जो अन्तर है, वह और भी महान् हो जाता है जब हम जीवन के गहरे तथ्यों की चर्चा करते हैं। परमात्मा अथवा भगवान की सत्ता महानतम् है, अतः उसके विषय में चर्चा भी महानतम है। उसको सुने व उस पर मनन किये बिना जो अन्तर पड़ता है, उसका तो हिसाब लगाना ही कठिन है क्योंकि उसके परिणाम-स्वरूप मनुष्यात्मा प्रभु-मिलन से, प्रभु के द्वारा सर्वोच्च प्राप्ति होने से वंचित रह जाती है।

हमें यह याद रखना चाहिए कि कोई जिज्ञासु हो या ज्ञानवान, यदि वह किसी दूसरे की बात को सुने व समझे बिना ही निर्णय कर लेता है तो उससे हानि होती है।

**बनमालीपुर**– 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' योजना के अंतर्गत निकाली गई 'शान्ति-यात्रा' का एक मनोरम दृश्य।

कविता

# जन्माष्टमी मना रहे हैं हम

भले सर्प हमारे सामने है और विषमय फन खुला-खुला
बात नहीं मुख एक की पर पाँचों में भरा हुआ
फिर भी जब–
हम दहन करें नर्तन सर पे उसके,
मुस्कराएँ, बंसी चैन की बजाएँ सुख से,
तो फिर समझें–
श्री कृष्ण आ रहे हैं अब।
जन्माष्टमी मना रहे हैं हम।।
भले रात घनेरी, घटाटोप अँधेरा,
दीखे न कोई किरण, अज्ञान ने डाला डेरा,
फिर भी जब–
विकारी कँसों से पटकी कन्याएँ, कौंधें बन बिजली अपार
खुल जाए ताला दैहिक बुद्धि का, सो जाएँ पहरेदार विकार
तो फि समझना–
श्री कृष्ण आ रहे हैं अब।
जन्माष्टमी मना रहे हैं हम।।
हो भले कितना भी असुर कोई मन से,
रास न आए कोई भी शुभ कर्म उसे,
फिर भी जब–
रास मिला के शुभ भावों की हम खुद मन से रास करें
अन्तःकरण शुद्ध, प्रबुद्ध से जीवन उसकी मिठास करें
तो फिर समझना–
श्री कृष्ण आ रहे हैं अब।
जन्माष्टमी मना रहे हैं हम।।
हमने तो रखा है व्रत दृढ़ मयूर पंख लाने का, मरने तक
खाते रहेंगे मक्खन 'सत्य ज्ञान' का कृष्ण जन्मने तक
समझते रहो तुम रात कलियुगी पर अमृतवेला यह हमारा,
हम शिव के गोप-गोपी, जमुना का कंठा आबू हमारा,
याद में डुबकी लगा के देह रूप वस्त्र भुला रहे हैं हम
तुम लगाए जाओ दाग कृष्ण पे, बेदाग बता रहे हैं हम
समझ जाए यह गुह्य राज़ जमाना तो फिर समझना–
जन्माष्टमी मना रहे हैं हम।
श्री कृष्ण आ रहे हैं अब।।
न सिर्फ जन्माष्टमी मना रहे हैं हम
न सिर्फ श्री कृष्ण आ रहे हैं अब
पर, श्री कृष्ण की दुनिया में जा रहे हैं हम
सुख शान्तिमय संसार बना रहे हैं हम

**ब्र० कु० राजकुमारी, मजलिस पार्क, दिल्ली**

# दृढ़ मनोबल

ब्र० कु० प्रोफेसर कालिदास, अहमदाबाद

मन, बुद्धि और संस्कार, सहित चैतन्य सत्ता आत्मा का मन बहुत ही चंचल है। 'म' से शुरू होने वाली दस चंचल वस्तुओं में उसका स्थान पहला है।

"मनो मधुकरो मेघो मानिनी मदनो मरुत।
मा मदो मर्कटो मत्स्यो मकारा दस चंचला।।"

मन की गति को यदि योग्य दिशा देने का प्रशिक्षण दिया जाता है तो मन द्वारा पैदा होने वाले तरंगों से स्पष्ट प्रभावशाली विचारों का जन्म होता है। मनुष्य आध्यात्म पथ पर आगे बढ़ता है, तब उसमें हंस-वृत्ति पैदा होती है। यह वृत्ति उसे ज्ञात कराती है कि उसके मन का यथार्थ आहार क्या हो सकता है ?

यदि मन यथार्थ दिशा में गति करता हो तो उसके संकल्पों को साकार करने के लिए, दृढ़ता लाने के लिए विशेष पुरुषार्थ की आवश्यकता होती है। निश्चित ध्येय, लक्ष्य या संकल्प में मन को दृढ़ बनाना उसे दृढ़ मनोबल कहा जाता है। अंग्रेज़ी में इसे 'स्ट्रॉंग विल पावर' (Strong Will Power) कहा जाता है। दृढ़ मनोबल के लिए एकाग्रता की आवश्यकता होती है। एकाग्रता से हम निर्धारित लक्ष्य या ध्येय से संबंध रखने वाली फ़जूल बातों की विस्मृति कर सकते हैं। साधक जब सर्व शक्तियों सहित, कर्मेन्द्रियों की एकाग्रता के साथ जिस भी कार्य के लिए प्रवृत्त होता है, पूरी मग्नता से कार्य की सफलता के लिए पुरूषार्थ करता है तो सफलता दूर नहीं होती। उसकी नींव है दृढ़ मनोबल । दृढ़ मनोबल से अनेक क्षेत्रों में इच्छानुसार परिणाम पा सकते हैं।

दृढ़ मनोबल आत्मा की प्रतिभा और पुरुषार्थ पर निर्भर है। आत्मा की शक्तियों के विकास के लिए हम जितना पुरुषार्थ करते हैं, खुद की साधना रूपी लेबोरेटरी में जितने प्रयोग करते हैं, उसी हिसाब से आत्मा की विभिन्न शक्तियाँ जीवन-व्यवहार में प्रत्यक्ष हो सकती हैं।

दृढ़ मनोबल की धारणा के लिए किसी को प्रयोगिक श्रेणियों से गुजरना पड़ता है, तो किसी के लिए वह सहज साध्य भी हो सकता है। सबसे पहले खानपान, आहार, मनोरंजन, अमृतवेले निश्चित समय पर उठना आदि किसी एक संकल्प को धारण करो। फिर उसमें कितने समय तक दृढ़ता रहती है, उसकी जाँच करो। मन की गति-विधियों को साक्षी बनकर देखो। उसकी योग्यता, अयोग्ता का विचार करो। आत्मा को विशेष बल मिले—ऐसे आशावादी, पोज़ीटिव विचार करो। इससे संकल्प को दृढ़ बनाने में विशेष बल मिलेगा। दृढ़ मनोबल के लिए जीवन में आहार, संग और पढ़ाई भी महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

दृढ़ मनोबल कैसे कार्यों के लिए करना है—यह भी सोचने, समझने जैसी बात है । मनुष्य की वृत्ति, प्रवृत्ति में उसके लालन-पालन, संस्कार निर्माण, शिक्षा आदि चीज़ों का प्रभाव होता है। आजकल दृढ़ मनोबल देखने को मिलता है लेकिन उसमें हिंसात्मक, खंडनात्मक, संहारात्मक वृत्तियों को प्रधानता दी जाती है। जबकि सृजनात्मक, रचनात्मक, विश्व कल्याणार्थ—अच्छे हेतुओं के लिए दृढ़ मनोबल का विकास करना उसमें मानव जीवन की महानता और सार्थकता निहित है।

दृढ़ मनोबल सहरा जैसी मरुभूमि में नंदनवन बना सकता है। पंगु को पर्वत लांघने की शक्ति दे सकता है। शारीरिक कमज़ोरियों को भुलाकर स्वस्थ मानव सम बेहतर सिद्धियों की प्राप्ति करा सकता है। इसके लिए चाहिए केवल एक ही धुन, एक ही लक्ष्य। द्रोणाचार्य ने धनुर्विद्या की कसौटी ली, उसमें अर्जुन का लक्ष्य कितना स्पष्ट था! उसी तरह दृढ़ संकल्प की गतिविधि में भी वैसी ही दृढ़ता चहिए । केवल दृढ़ संकल्प पर्याप्त नहीं है परन्तु उसको साकार करने के लिए, लगातार पुरुषार्थ की आवश्यकता है। इसके लिए आने वाले विघ्न, परीक्षाएँ, तकलीफें प्रसन्न मुखारविंद से झेलने की क्षमता होनी चाहिए।

समाज, राष्ट्र और विश्व में भिन्न-भिन्न दिशाओं में महत्त्वपूर्ण, एतिहासिक कार्य हुए हैं। उनमें दृढ़ मनोबल का योगदान कम नहीं है। ऐसी एक घटना आज भी विश्व के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखी हुई है। भारत को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त कराने के लिए महात्मा गाँधीजी ने दांडी-यात्रा के पूर्व ५ मार्च, १९३० की शाम को एक सभा के बीच जो शब्द उच्चारण किये, उसमें दृढ़ मनोबल का दर्शन होता है—

'इस पापी सरकार का नाश करने के लिए प्रभु ने मुझे निमित्त बनाया है—ऐसा मुझे दिल से अनुभव हो रहा है। मैं कौए की तरह मरूँगा, कुत्ते की तरह मरूँगा लेकिन बिना

स्वराज्य प्राप्ति इस आश्रम में पैर नहीं रखूँगा।'

इस दृढ़ मनोबल के जादू ने भारत को आज़ादी दिलायी।

दादा लेखराज जी को दिव्य साक्षात्कार हुए और स्वर्ग की स्थापना हेतु विशेष कार्य करने की ईश्वरीय प्रेरणा हुई। उनके दृढ़ मनोबल के कारण आज देश-विदेश में राजयोग और ईश्वरीय ज्ञान का संदेश फैल चुका है जिसके फलस्वरुप आज हज़ारों लोग निर्व्यसनी और निर्विकारी जीवन जीने लगे हैं।

अमेरिका के भू० पू० राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने अपनी साधारण स्थिति में गुलामों की दयनीय स्थिति देखी और गुलामी मिटा देने का दृढ़ संकल्प किया। ऐसे वे अमेरिका के राष्ट्रपति बने और गुलामों के मसीहा, उद्धारक बन सके। इसी तरह समाज में विशेष परिवर्तन के लिए दृढ़ मनोबल की आवश्यकता है। अन्याय, शोषण, दुश्वृत्तियाँ, कुरीतियाँ, असमानता निवारण आदि विविधता संपन्न क्षेत्रों में दृढ़ मनोबल से काफ़ी परिवर्तन किया जा सकता है।

दृढ़ मनोबल के लिए आत्मविश्वास की आवश्यकता है। हमने जो दृढ़ संकल्प किया है उसे साकार करने के लिए लगातार रसपूर्ण, उमंग-उत्साह सम्पन्न पुरुषार्थ की आवश्यकता है, हमारे ध्येय के सामने आनेवाले संघर्ष, मुसीबतों का धैर्यता से सामना कर आगे बढ़ने की ज़रूरत है। चाहे कैसा भी कार्य हो, पहले कदम में ही सफलता नहीं मिलती। बीच-बीच में असफलता और हताशा की घड़ियाँ दृढ़ संकल्प की नींव को हिला न दें, उसके लिए दृढ़ संकल्प के बीज को परमात्मा की याद रूपी पानी से सिंचते रहना चाहिए। अपनी प्रतिभा को पहचान कर जीवन को ऊर्ध्वगति की ओर ले जाने के लिए पुरुषार्थ में लीन रहना चाहिए।

दृढ़ मनोबल के लिए हमने जो संकल्प किया है, उसका विश्लेषण करना चाहिए । खुद की शक्तियाँ, संजोग, परिस्थिति आदि सर्व पहलुओं का विचार करना चाहिए। जिसमें वास्तविकता संभव हो, ऐसे संकल्प करने चाहिएं। सिद्धि भी धीरे-धीरे आगे बढ़ने से मिलती है। उसमें धैर्यता की भी आवश्यकता है।

दृढ़ मनोबल के लिए निर्णय शक्ति, परख शक्ति, एकाग्रता, दीर्घ दृष्टि, सर्व का सहयोग लेने की कला भी चाहिए। राष्ट्र में महत्त्वपूर्ण पदों पर ऐसे दृढ़ मनोबल वाले व्यक्ति होते हैं तो राष्ट्र को नई दिशा,नई गति मिलती है, राष्ट्र का नाम रोशन होता है। सेनाध्यक्ष, राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री जैसे महत्त्वपूर्ण पदों पर आरुढ़ व्यक्तियों के दृढ़ मनोबल के आधार पर ही राष्ट्र के उत्थान और पतन का आधार है। जैसे परिवार के प्रधान व्यक्ति के दृढ़ मनोबल से परिवार सुखी होता है, वैसे विभिन्न क्षेत्रों में, संस्थाओं में उनके वरिष्ठ अधिकारियों के दृढ़ मनोबल संपन्न नेतृत्व में ही उनका विकास होता है।

आज का वायुमंडल इतना चंचल है कि इन्सान को उसके ध्येय से विचलित होने में देरी नहीं लगती । कितने ही लोग अपने आदर्शों, ध्येयों से विचलित होकर समय के प्रवाह के साथ चल देते हैं। तब दृढ़ मनोबल वाला व्यक्ति ही ऐसे समय अचल, अडोल रहकर सिद्धियाँ हासिल कर सकता है।

दृढ़ मनोबल सिद्ध करके उसका उपयोग जनहित के कार्यों के लिए, आत्माओं के उत्थान के लिए ही करना चाहिए। उसमें नीति, दिव्यता, और श्रेष्ठ चारित्र्य के मूल्यों को महत्त्वपूर्ण स्थान देना चाहिए। 'राम' और 'रावण' के मनोबल में विभिन्नता थी। कभी किसी संकल्प की दृढ़ता धारण की, समय की कसौटी में महसूस हुआ कि यह संकल्प गलत है तो उसे छोड़ देना चाहिए। उसमें जड़ता नहीं होनी चाहिए।

गीत

# बच्चों को उपदेश दिया

प्रजापिता ब्रह्मा के तन में, शिवबाबा ने प्रवेश किया।
ब्रह्मा बाबा के मुख द्वारा, बच्चों को उपदेश दिया।।
तुम बच्चे हो सूक्ष्म आत्मा, अशरीरी अब बन जाना
परमधाम के तुम वासी हो, इसको भूल न जाना
देह भान का मान मिटा कर, बिन्दी में अब टिक जाना
भृकुटी में इस समय वास है, सबको परिचय बतलाना
पवित्रता धारण करने का, बाबा ने आदेश दिया।
प्रजापिता ब्रह्मा के तन में····
काम क्रोध अरु मोह लोभ को, अहंकार का त्याग करो।
भय, ईर्ष्या, आलस्य दोष को, माया का परित्याग करो
अपने को निश्चय करके, 'फरियाद' नहीं फिर याद करो
जाति-पाँति का भेद बढ़ा कर, समय को ना बर्बाद करो
दान विकारों का करने को बाबा ने संकेत दिया।
प्रजापिता ब्रह्मा के तन में····
बनकर के देवी-देवता, धरा पे सतयुग लाना है
नर से नारायण बनकर के, रावण राज्य हटाना है
नारी से लक्ष्मी बनकर के, दो-दो ताज लगाना है
करो कमाई पुरुषार्थ की, तुमको अब तो घर जाना है
मुख से बोलो 'ओमशान्ति', बाबा ने सन्देश दिया।
प्रजापिता ब्रह्मा के तन में····

**ब्र० कु० ओंकारनाथ, राजेपारा, सीतापुर**

# कर्मों पर ध्यान दो

## – कर्म बड़ा बलवान है –

ब्रह्माकुमारी चक्रधारी, दिल्ली

द्वापर युग की बात है कि भारत देश के एक छोटे-से खण्ड पर एक राजा राज्य करता था। राजा में और तो कई गुण थे परन्तु वह बहुत अभिमानी था। अपनी महिमा सुनने में उसे बड़ी खुशी होती थी। अपनी महिमा सुनने की उसे यहाँ तक लत पड़ गई थी कि अगर कोई उसकी महिमा करने की बजाय भगवान की महिमा करे तो भी उसके मन में ईर्ष्या व घृणा उत्पन्न हो जाती थी। इसका परिणाम यह हुआ था कि लोग उसके सामने सच्ची बात नहीं कहते थे बल्कि ऐसी बातें कहते थे जिसमें उसकी महिमा हो और वो खुश हो।

एक दिन उस राजा ,जिसका नाम था अभिमान सिंह , ने अपने तीनों बच्चों से एक प्रश्न पूछा। अपने बड़े पुत्र को सम्बोधित करते हुए वह बोला– "खुशामद सिंह, एक सवाल का जवाब दो।"

खुशामदसिंह बोला –"जहाँपनाह, कहिए क्या सवाल है? यह राजकुमार उसका जवाब देने की पूरी कोशिश करेगा और आपकी कृपा से, आशा है कि जबाब ठीक ही होगा।"

राजा अभिमान सिंह बोला–"यह बताओ कि आपका पालन कौन करता है–राजा, भाग्य या ईश्वर?"

खुशामद सिंह बोला–"मेरे विचार में तो यह प्रश्न बहुत सहज है। ईश्वर को तो मैंने कभी कुछ देते देखा नहीं। अगर देने वाला भाग्य हो तो भाग्य ने भी मुझे राजा के हवाले कर दिया। फिर यह तो मैं साफ देखता हूँ कि राजा ही मेरा पालन करता है। इसलिए, मान्यवर, मेरा उत्तर यह है कि राजा ही पालन करता है।"

तब राजा ने यही प्रश्न अपने दूसरे पुत्र मक्खन सिंह से किया। राजा बोले–"मक्खन सिंह, अब तुम इस प्रश्न का जबाव दो।"

मक्खन सिंह बोला–इसका उत्तर तो स्पष्ट ही है और वह यह कि आप पिता ही हमारा पालन करते हैं। इसका दूसरा कोई उत्तर हो ही नहीं सकता।

तब राजा ने अपने तीसरे बच्चे से प्रश्न पूछा।

राजा बोला–"कर्मसिंह, तुम्हारे तो हमेशा कुछ न्यारे ही विचार हुआ करते हैं लेकिन इस विषय में तो तुम्हारा भी यही ख्याल होगा।"

कर्मसिंह–"शायद मैं छोटे मुँह बड़ी बात कह रहा हूँ। देखने में तो यही आता है कि आप ही हमारा पालन करते हैं। मेरे दोनों बड़े भाई भी यही मानते हैं। परन्तु मेरा मन्तव्य यह है कि यह संसार कर्म प्रधान है। इसे कर्म क्षेत्र कहा गया है। यहाँ जैसा कोई कर्म रूपी बीज बोता है, वैसा ही उसे फल मिलता है। फिर चाहे वह किसी द्वारा भी मिले। कर्मों का ही हिसाब-किताब परस्पर लेन-देन का कारण बनता है। कर्म से ही मनुष्य के भाग्य का निर्माण होता है।"

हाँ, मैं एक बात और यह मानता हूँ कि कभी किसी आदि काल में परमात्मा ने कर्मों का ज्ञान दिया होगा। जो उसके अनुसार कर्म करते होंगे उनका श्रेष्ठ भाग्य बनता होगा और जो विरुद्ध करते होंगे, वे दुर्भाग्यशाली बनते हैं। आपने कभी कोई अच्छे कर्म किये होंगे, इसलिए आपको राज्य के रूप में भाग्य मिला है। मैंने भी कोई अच्छे कर्म किये होंगे और आपसे मेरा कोई हिसाब-किताब रहा होगा, इसलिए मेरा राज्य-घराने में जन्म हुआ। कर्म की गति बड़ी प्रबल है महाराज–ऐसा ऋषियों ने माना है।"

कर्मसिंह की बात सुनते-सुनते राजा अभिमानसिंह का चेहरा अधिकाधिक तनाव पूर्ण होता जा रहा था और लगता था कि कर्मसिंह के बात पूरा करने तक भी उनके लिए मूक रहना मुश्किल हो रहा था। अतः कर्मसिंह के वाक्य का अन्त होते ही वो फटाक से बोले–कर्मसिंह, तुम प्रारम्भ से ही कृतघ्न और एहसान फरामोश हो। जिसका दिया खाते हो, तुम उसके प्रति भी इतने निर्लज्ज हो कि इस बात को स्वीकार नहीं करते कि तुम्हारा पालन करने वाला पिता मैं हूँ। सुन लो कर्मसिंह, यह राजाज्ञा है जिसका उल्लंघन नहीं किया जा सकता। तुम आज ही 24 घण्टे के अन्दर इस नगर से अपना डेरा कूच कर जाओ।

राजा की आज्ञा सुनते हुए उसके दरबारियों के चेहरे बड़े मायूस थे क्योंकि सभी की उस राजकुमार से हमदर्दी थी परन्तु वे कुछ कर नहीं सकते थे।

इतने में राजकुमार कर्मसिंह सिर झुकाकर व हाथ जोड़कर बोला–जो महाराज की आज्ञा हो। और नमस्कार करके अपनी माता से आज्ञा लेकर जाते समय यह कहते हुए चल दिया–राजमाता, मैं आपका व पिताजी का अभिनन्दन करता हूँ और यह आशा करता हूँ कि कुछ समय के बाद फिर

मिलेंगे परन्तु अभी राजाज्ञा को टालना उचित नहीं। वहाँ से प्रस्थान करके कर्मसिंह जंगल में चला गया। वहाँ एक सन्त की कुटिया देखकर पानी पीने के लिए रुक गया। पानी देते हुए सन्त ने उसका परिचय पूछा और उसके विषय में जानने पर सन्त ने उसे उसी कुटिया में रहने की अनुमति दे दी। राजकुमार वहीं रहने लगा।

उस कुटिया के पास एक कुंआ था। राजकुमार वहाँ से पानी भर कर लाया करता था। जब कभी वह कुएँ में बाल्टी डालता तो उसे लगता कि उसकी बाल्टी किसी सख्त चीज से लगती है और कभी-कभी एक रूकावट-सी महसूस होती है। उसने सोचा कि एक दिन अधिक समय लगा कर इस सख्त चीज की छानबीन करेंगे कि आखिर यह क्या है। राजकुमार ने उस दिन कुएँ में निकालने वाली खूँटियाँ डाली। उन खूँटियों के सिरे उस सख्त व भारी चीज में फंस गए। राजकुमार ने जोर लगाकर उसे खींचा और उसे देखकर अचम्भा हुआ कि वह एक सोने का कलश था। कुएँ के बाहर समतल पर रखने पर जब उसने उसका ढक्कन खोला तो देखा कि वह अशर्फियों से भरा हुआ था। अगली बार जब राजकुमार फिर पानी लेने गया तो उसकी बाल्टी फिर किसी सख्त चीज से टकराई। राजकुमार ने फिर वही उद्यम किया और इस प्रकार 6 बार उसने अशर्फियों व रत्नों के 6 कलश निकाले। राजकुमार ने वहीं एक नगर बसाना शुरू कर दिया।

इसी बीच राजा अभिमान सिंह पर किसी पड़ौसी राजा ने आक्रमण कर उसे परास्त कर दिया। मजबूर होकर राजा अपनी रानी व राजकुमारों के साथ जंगल की ओर भागा जहां एक छोटा नगर बस रहा था। वहां जाकर उसने प्रबन्धकों से रहने के लिए जगह व पीने के लिए पानी मांगा। प्रबन्धकों ने जाकर कर्मसिंह को यह सूचना दी। कर्मसिंह दौड़ा-दौड़ा अपने माता-पिता व भाइयों के पास गया ताकि उनके लिए उचित व्यवस्था की जाए। उसने अपने माता-पिता को अपना परिचय नहीं दिया। काफी समय जंगल में रहने के कारण कर्मसिंह की दाढ़ी व बाल आदि बढ़ गए थे, इसलिए वे भी उसे सहज व तुरन्त नहीं पहचान पाये।

कुछ दिन बाद वह राजा और रानी कर्मसिंह के आतिथ्य से प्रभावित और प्रसन्न होकर कर्मसिंह के सम्मुख ही उसकी महिमा कर रहे थे। उसके भाइयों ने तो उसे यहाँ तक कह दिया कि धन्य हो, आप ही हमारे अन्नदाता हो। इस पर कर्मसिंह ने उन्हें कहा– "बन्धुवर, दाने-दाने पर खाने वाले की मोहर है। हरेक मनुष्य का अपना नसीब है। उसका नसीब, उसकी तकदीर उसके अपने ही कर्मों से बनती है। अतः यह मनुष्य को हमेशा याद रखना चाहिए कि यह संसार कर्म-प्रधान है।"

उसकी बात सुनकर राजा अभिमान सिंह ठण्डी सांस लेते हुए बोल उठा–आज से काफी समय पहले यही बात मेरे एक लाडले बच्चे कर्मसिंह ने मुझे कही थी। तब मैं इस बात को नहीं समझा था। आज मैं इस बात की सच्चाई को समझा।यह कहते हुए उसकी आँखें गीली हो गई। वह कहने लगा–हाय, मैंने अपने राज्य के नशे में अपने उस ऋषि तुल्य बुद्धिमान बच्चे को अपने राज्य से निकाल दिया! पता नहीं वह कहाँ होगा और कैसे अपना जीवन बिताता होगा! यह सुनते-सुनते उसकी माता की आँखों से भी आँसू बहने लगे।

इस पर कर्मसिंह बोला–आपके उस बच्चे के बारे में जानकारी मैं दे सकता हूँ। आपकी आज्ञा हो तो उसको यहाँ आपके सम्मुख ला खड़ा कर दूँ।

यह सुनकर उन दोनों की आशाएं बंध गई। वे बाँहें पसार कर कहने लगे–यह भी कोई पूछने की बात है, इसमें देर न करो। हमारे उस बच्चे से हमें मिला दो।

तब राजकुमार ने कहा–यह जो सारा उपनगर बस रहा है, यह आपके उस बच्चे ही के भाग्य का फल है और माताजी, पिताजी, बन्धुवर, वह कर्मसिंह आपके सामने खड़ा है और आप सब से मिलकर अति प्रसन्न है। अब यह सब कुछ आपका है।

उन सभी ने इस बात का एहसास किया कि कर्म और उसका फल ही मनुष्य के सुख-दुख का कारण और परिणाम है। इसलिए मनुष्य को अपने कर्मों पर ध्यान देना चाहिए।

बैंगलोर– प्रशासकों के लिये आयोजित सम्मेलन में मंच पर उपस्थित है (बाएं से) ब्र० कु० मरियाप्पा, ब्र० कु० अम्बिका, दादी हृदय पुष्पा जी तथा किर्लोस्कर इलेक्ट्रिक कम्पनी के उपाध्यक्ष भ्राता एम०एन० कृष्णा राव।

# "आत्मिक चित्रिकरण"

ब्र० कु० श्रीपाल सिंह, जमखंडी

किसी ने ठीक ही कहा है कि बुरा मत सुनो, बुरा मत देखो, बुरा मत कहो और बुरा मत सोचो।

तो आज हम इस विषय पर जरा विचार करेंगे कि क्यूँ हम बुरा ना सुनें, बुरा ना देखें, बुरा ना कहें और बुरा ना सोचें? इससे मनुष्यात्मा पर क्या प्रभाव पड़ता है और प्रभाव (संस्कार) कैसे पड़ता है? इस बात पर हम यदि गहराई से विचार करें तो वास्तव में हम आत्माओं पर इन बातों के संस्कार गिरते हैं। और इस जन्म में ही नहीं, बल्कि जन्म-जन्मान्तर से ही इन बातों के संस्कार पड़ते चले आए हैं।

स्थूल रूप से जब चित्रिकरण (Photography) किया जाता है, तब कैमरे के सामने जो व्यक्ति अथवा दृश्य (Object) होता है वह फिल्म पर चित्रित हो जाता है। स्थूल फिल्म में सिर्फ़ दृश्य या व्यक्ति ही चित्रित होता है क्योंकि फिल्म में विचार करने या निर्णय करने की शक्ति नहीं होती। फिल्म चेतन नहीं होती, फिर भी उसमें चित्र अंकित हो जाता है। उसका कारण फिल्म के ऊपर सिल्वर नाइट्रेट नाम के रसायन की कोटिंग (परत) होती है जिसमें सिल्वर (चाँदी) की मात्रा बहुत कम होती है।

मनुष्य शरीर में आँखें एक कैमरे की तरह काम करती रहती हैं। आँखें जो देखती हैं, उसका मन रूपी पर्दे (Film) पर असर होता है। खास कर के हमारी दिनचर्या से अलग जो दृश्य होते हैं उनका मन पर ज्यादा असर होता है, जैसे कि फिल्में अथवा अश्लील दृश्य वगैरह। मन वह दृश्य देखने के बाद उन दृश्यों के बारे में संकल्प, विकल्प करता है। चूँकि मन आत्मा ही की शक्ति है, इसलिए उसका आत्मा पर ही प्रभाव पड़ता है। ठीक इसी तरह बोलने, सुनने और सोचने का भी आत्मा पर ही असर होता है।

कई बार हम देखते हैं कि हमारी दिनचर्या में जो बातें होती हैं, वही हमारे स्वप्न में चली आती हैं। कई बार किसी नए अपरिचित व्यक्ति को हम देखते हैं, तो वही व्यक्ति उसी दिन स्वप्न में भी आ जाता है। और कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि जिसे हमने कभी देखा भी नहीं और जिसके साथ हमारा कोई सम्बन्ध और वार्तालाप भी नहीं हुआ होता है, या जिस व्यक्ति के बारे में हमने कभी सोचा हुआ भी नहीं होता है, वह सारे दृश्य हमारे स्वप्नों में आ जाते हैं। उस समय पर हम तो सोये हुए होते हैं, हमारी यह स्थूल आँखें भी बंद होती हैं, उन दृश्यों को हमने कभी इन स्थूल आँखों से देखा भी तो नहीं होता है। फिर भी, वह सारे दृश्य, व्यक्ति हमारे स्वप्नों में क्यूँ और कैसे आ जाते हैं? यही है आत्मा पर इस जन्म में और पिछले, कई जन्मों में पड़ा हुआ गुप्त चित्रिकरण (संस्कार) अथवा आत्मा पर पड़ा हुआ प्रभाव।

इसी प्रकार हम मनुष्य आत्माएँ जब सतयुग (Golden Age) से त्रेतायुग (Silver Age) में आती हैं और त्रेतायुग से द्वापरयुग (Copper Age) में आती हैं, तब रजोप्रधान हो जाती हैं। तब सिल्वर एज के संस्कार कम होने से विकर्मों का खाता आत्मा पर बढ़ता चला आता है और कलियुग अन्त तक अर्थात् 63 जन्मों तक बढ़ता ही आता है। और जब अंतिम जन्म में पाप कर्म ज्यादा बढ़ जाते हैं और आत्माएँ पतित बन जाती हैं, तब सभी आत्माओं के पिता परमात्मा 'शिवबाबा' इस सृष्टि पर आकर हम आत्माओं को 'राजयोग' सिखाकर योगाग्नि से पापों को भस्म करने की शिक्षा देते हैं। तो हे आत्माओ! आओ, अब जो थोड़े में भी थोड़ा समय बचा है, उसी समय को हम भगवान की शिक्षाओं द्वारा सार्थक कर लें, और व्यर्थ सुनना, व्यर्थ देखना, व्यर्थ बोलना और व्यर्थ सोचना बंद कर दें ताकि हमारा अगला जन्म आने वाली भविष्य सुख-शान्ति सम्पन्न दुनिया में हो और हमें राजाई पद प्राप्त हो। इसी चेतन आत्मा रूपी फिल्म पर वर्तमान संगमयुग में दैवी संस्कारों का चित्रिकरण कर लें।

## "सत्यता"

हमने देखा नहीं बाबा तुम्हें, फिर भी तूने कमाल कर दिया।
तेरी प्यार भरी नज़र ने, मेरे नयनों को निहाल कर दिया।।
मैं क्या था, क्या हूँ, क्या बनूँगा—हो गया सब को मालूम।
पा कर ज्ञान के बिन्दू बना दिया मुझे मासूम।
मासूम मैं इतना बना—भूल गया विकारों का नामो-निशां।।
बाबा तुमने यह क्या चक्र चलाया है,
अब तो सब कहने लगे सतयुग आया कि आया है।
ज्ञान से फैला इतना प्रकाश कि मैं पहुँच गया विषय सागर पार,
हे प्राण बाबा मेरी तरफ से तुम्हें, कोटि कोटि हो प्रणाम।

—ब्र० कु० डा० एस० आर० गर्ग, फिरोजपुर सिटी

# परमात्म-प्राप्ति का दिव्य अनुभव

ब्र० कु० ममता, भरतपुर

जून 12, 1988 की वह शाम, मेरे जीवन की सुनहरी प्रभात थी। उस दिन अलौकिक सुख का वरदान दु:खहर्ता सुख कर्त्ता बाप से बिना पुरुषार्थ के ही पाया मैंने। मैं उस दिन एक ब्रह्माकुमारी बहन के सहयोग से अचानक ही भरतपुर सेवाकेन्द्र पर जा पहुँची। सचमुच जैसी कल्पना वहाँ के बारे में की थी, उससे कहीं अधिक अच्छा मुझे वहाँ लगा।

सर्वप्रथम चित्र-प्रदर्शनी के द्वारा परिचय एवं बाद को साप्ताहिक पाठ्यक्रम किया। कहीं भी शक की गुंजायश नहीं थी। वास्तव में इतना सत्य एवं सम्पूर्ण ज्ञान सहज विधि देना—ज्ञान सागर परमात्मा का ही ईश्वरीय कमाल है! बचपन से ही ईश्वरीय रहस्य को जानने की जिज्ञासा के फलस्वरूप शंकर के अद्वैत वेदान्त , मीमांसाएं , बौद्ध दर्शन में आत्मा का एक दीप शिखा से दूसरी को प्रज्जवलित करने के समान है, पुनर्जन्म के सिद्धान्त तथा चापोक के 'चारू-वाक्य' आदि को भी पढ़ा। देहधारियों द्वारा दिया गया यह ज्ञान सिर्फ उलझे हुए सूत की भांति था जिससे जिज्ञासा संतुष्ट नहीं हुई किन्तु निराकार ज्ञानसागर परमपिता परमात्मा शिव द्वारा प्रजापिता ब्रह्मा मुख से दिये गये ज्ञान से अन्तर्मन में गहरी शांति की अनुभूति हुई है। ध्यान कक्ष (Meditation Room) में बापदादा के बड़े चित्र के सामने बैठकर मन और बुद्धि को परमात्मा के हवाले करने से तो रहे-सहे रहस्य भी खुद-बा- खुद खुल गये।

प्रथम दिन ब्र० कु० कविता बहन ने स्वयं बैठकर मुझे योगाभ्यास कराया तथा तत्पश्चात् टेप की हुई मधुर अशरीरी फरिश्ता बनाने वाली कमेंन्टरी सुनने को मिली। सभी कुछ वन्डरफुल था! प्रत्येक वाक्य आवाज़ और आवाज़ की दुनिया से दूर की न्यारी और प्यारी शांति का अनुभव कराता था। मैंने मन-बुद्धि के द्वारा सूक्ष्म-वतन एवं परमधाम की सैर की। उस समय सचमुच मैंने अपने आपको एक परवाना अनुभव किया जो स्वतः ऊपर की ओर तैर रहा था। सामने दिव्य प्रकाश था—अलौकिक सौंदर्यपूर्ण आभामंडल। मैं मानो आनन्द के सागर की लहरों में लहरा रही थी। तत्पश्चात् मैंने बाबा का आश्रम देखा। वर्तमान युग में सम्पूर्ण पवित्रता, सहज-ज्ञान एवं सहज राजयोग का यह मंदिर वास्तव में सच्चा-२ आश्रम है। यहाँ दिन प्रतिदिन पवित्रता एवं ज्ञान के दिव्य आभूषणों से सजाकर अनेकों आत्माओं रूपी सजनियों का परमात्म-साजन से सच्चा सम्बन्ध जुटाया जाता है, जिससे मिलने वाला सुख अनुभव की बात है, वर्णन का विषय नहीं। वास्तव में यही सच्चा अतीन्द्रिय सुख है।

अब मैं आत्मा ईश्वरीय शक्ति के कमाल के फलस्वरूप निजस्वरूप में स्थित हूँ। मैं खुशी का अनुभव कर रही हूँ। अब मैं साधारण लड़की नहीं, बल्कि परमात्मा की प्यारी संतान हूँ, जिसे परमात्मा ने अपार प्यार देकर अपने गले लगाया है। मन गाता है—

एक खजाना हाथ लगा, मंजिल मिली है मुझको।
बाबा तेरी एक नजर ने, निहाल किया है मुझको।

आज मैं ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग के आधार से साक्षी होकर कर्म करती हूँ। चैक कर चेन्ज करती हूँ। बाप को सामने रख संकल्प कराने, उसके मार्ग दर्शन में योजना बनाना तथा उसकी शक्ति से कर्म करना, बोझा नहीं लगता और मैं हल्की रहती हूँ।

## भारतभूमि को स्वर्ग बनाओ

शक्तियां जागो अब जग को जगाओ।
भारतभूमि को फिर से स्वर्ग बनाओ।।
शिव की शक्ति, ब्रह्मा की भुजाएं
सर्व सहयोगी आप जगतमातायें
नूतन विश्व की कलम लगाओ
भारतभूमि को.....
शिव ने दिया है एक अद्भुत नारा
स्वर्ग-द्वार खुलेगा, माताओं द्वारा
सेवा की जिम्मेवारी का ताज उठाओ
भारतभूमि को.....
जगत-जननी रूप असली तुम्हारा
बेहद दृष्टि से रचा विश्व ये सारा
योग के बल से रूहों को सजाओ
भारतभूमि को.....

ब्र० कु० मोहन, आबू-पर्वत

# सर्वगुण सम्पन्न थे श्रीकृष्ण !

ब्र० कु० अवतार, आबू-पर्वत

हमारे इस प्यारे भारत देश की गौरवगाथा निराली ही है। वास्तव में यह देश वह उपवन है जिसके पावन आंचल में समय प्रति समय विविध महामानव, युग पुरूषों रुपी सुमनों ने खिलकर इस उपवन की गौरव गरिमा को बनाए रखने में स्वयं का विलक्षण योगदान देकर ऐतिहासिक साहित्य को आगामी पीढ़ियों के लिए एक अति ही गौरव-शाली एवं सुखद धरोहर छोड़ गये हैं। कितनी महान् है संस्कृति हमारी!

इस पुनीत सुसंस्कृति और उच्च सभ्यता पर जब-जब भी संकट के काले बादल मण्डराने लगे, तब-तब ही किसी-न-किसी महापुरुष ने आकर धरती माँ के सन्ताप हरे। बस यही कारण है कि जहाँ हमारे पुरातन साहित्य में आध्यात्मिकता को प्रथम स्थान मिला है, वहीं हमारी संस्कृति भी हमें अलौकिकता के साथ-साथ मानवीय मूल्यों की सुरक्षा हेतु ईश्वरीय मर्यादाओं की सीमा रूपी लक्ष्मण रेखा से बांधती है।

जिन ऐतिहासिक साहसी वीर सन्त, महन्तों, पीर-पैगम्बरों, ऋषि-महर्षियों तथा गुरु-जनों और धर्म-रक्षकों ने अपने अद्भुत शौर्य-युक्त कर्तब से न केवल अपने नाम को इतिहास प्रमुख ही बनाया है किन्तु कहीं-कहीं तो श्रद्धालुओं ने उन्हें 'ईश्वर' जैसी अद्वितीय उपाधि से भी आभूषित कर दिया। यद्यपि वे ईश्वर तो नहीं किन्तु ईश्वरीय अनन्य सन्तान अवश्य थे।

अब प्रश्न उस महान् विभूति, ऐतिहासिक महापुरुष आनन्द कन्द श्रीकृष्ण चन्द्र जी महाराज का है जिस देवात्मा मात्र के यादगार स्वरूप के दर्शन के लिये आज भी नर-नारियाँ तरसते हैं, छटपटाते हैं, यहाँ तक कि स्वयं को न्यौछावर कर देते हैं। सोचनीय प्रसंग है कि ऐसी कौनसी महानता थी उस महामानव में? आज कन्यायें जिसके समतुल्य वर मिलने की कल्पनाओं के संकल्पों को अपने मन में पाले रहती हैं, माताएं श्रीकृष्ण जैसा बच्चा प्राप्त करने की अपने इष्ट के समक्ष भीख माँगती हैं और युवक ऐसे ही अद्भुत और वफादार, हर परिस्थिति में साथ देने वाले मित्र को प्राप्त करने की आशाओं, अभिलाषाओं को अपने मन में संजोये रखते हैं।

इस वृतान्त से यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि श्रीकृष्ण जी एक महान् गुणवान महात्मा तथा कोई अद्भुत् तेजस्वी एवं विलक्षण अथवा असाधारण हस्ती का नाम था। और बात भी सनातन सत्य है कि वह सर्वगुण सम्पन्न, सोलह कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी और मर्यादा पुरुषोत्तम थे।

अब विडम्बना यह है कि श्रीकृष्ण को दिव्य गुणों की खान तथा एक महान् अवभूति घोषित करने के पश्चात् उनके विषय में अनेकों विभ्रान्त अवधारणाओं का प्रचलन क्यों?

भारत माता के इस अति लाडले लाल तथा राष्ट्र के गौरवशाली इतिहास के एक मात्र आधार स्तम्भ, समस्त दिव्यगुणों से अलंकृत, दैवी मर्यादाओं के उदाहरण स्वरूप उस महात्मा को आरोपित अथवा कलंकित करना तो स्वयं एवं स्वयं की उस उच्चतम सुसभ्यता एवं गौरवमय संस्कृति को दूषित अथवा अभिशापित करना है। संयम और मर्यादाओं की मूर्ति आनन्द कन्द श्रीकृष्ण चन्द्र जी के विषय में जो निरर्थक तथा अनर्गल बातें बताई जाती हैं उनसे न केवल उस देवात्मा की वह अनुपम छवि ही धूमिल होती है अपितु वह चंचल तथा धूर्त भी घोषित होता है। जिसका दुष्परिणाम यह हुआ कि आज असामाजिक तत्व चोरी, अपहरण तथा अन्य सामाजिक कुरीतियों को फैलाने में इन्हीं निन्दनीय तर्कों को सहारा बना लेते हैं कि अमुक कार्य श्रीकृष्ण ने भी किया, यदि हमने कर लिया तो क्या हुआ! अहो, यह कैसी विडम्बना है! कैसी दयनीय दशा है मानव के भाग्य की कि जो उस महान् आत्मा से सत्प्रेरणा लेकर अपने चरित्र को दिव्य न बना सका!

हमारे पुरातन साहित्यों के अनुसार श्रीकृष्ण को एक कुशल प्रशासक, महान योद्धा, निपुण सारथी तथा वफादार मित्र आदि-आदि कहा गया है। निःसंदेह ही श्रीकृष्ण में यह सभी गुण विद्यमान थे किन्तु इसका यह तात्पर्य किसी भी अर्थ में नहीं कि वे एक हिंसक प्रवृत्ति के थे तथा उच्चतम दिव्य मर्यादाओं को खूँटी पर टाँगने वाले थे। यह तो हम पहले ही कह आये हैं कि आप संयम और मर्यादाओं के उदाहरण-स्वरूप थे।

हाँ, यह तो सार्वभौमिक तथा शाश्वत सत्य है कि

श्रीकृष्ण चक्रवर्ती राजा थे। लेकिन इसी अर्थ में वह केवल कुशल प्रशासक नहीं थे, अपितु उनका स्वयं की कर्मेन्द्रियों रूपी प्रजा पर भी सम्पूर्ण और निर्भीक आधिपत्य था।

महान योद्धा का आध्यात्मिक अर्थ यह है कि मानवीय शत्रु मायाजनित विकार काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार आदि पर वह पूर्ण रूप विजयी हो। निपुण सारथी का तात्पर्य यह है कि स्वयं को शरीर रूपी रथ से भिन्न आत्मा निश्चय कर सभी कर्मेन्द्रियों पर पूर्ण शासन हो। उपरोक्त स्पष्टीकरण के आधार पर श्रीकृष्ण निःसंदेह एक महान् योद्धा और निपुण सारथी थे। श्रीकृष्ण एक वफादार मित्र भी थे क्योंकि आप उदारचित्त, सत्यप्रिय, न्यायकारी और लोक अथवा सर्व के परम हितैषी थे।

यह तो ध्रुव सत्य है कि श्रीकृष्ण एक महान् पराक्रमी थे तथा आपकी यश, ख्याति भी अद्वितीय थी। जिसकी वह पुनीत यादगार आज श्रीकृष्ण जयन्ती (जन्माष्टमी) के रूप में मनाई जा रही है। आपके पवित्रतम श्रेष्ठ चरित्र का अनुमान यहाँ से लगाया जा सकता है कि आज के दिन भक्तगण स्वयं भी संयम-नियम तथा मर्यादाओं का बड़ी निष्ठापूर्वक पालन करते हैं। बस, यही उस देवात्मा की महानता का प्रतीक है। व्रत रखने का द्योतक यह है कि वे स्वयं सर्व बुराइयों से मुक्त थे। अतः आपके यादगार दिवस पर बुराइयों का व्रत लेने की प्रेरणा लेनी है।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के दिन प्रत्येक मानव प्राणी के मन में एक अद्भुत उमंग-उत्साह रहता है। जो सर्वत्र सुखद वातावरण, पवित्रता के शक्तिशाली संकल्पों के विशुद्ध प्रवाह का प्रतीक है। क्योंकि आपके साथ अनश्वर सुख, शान्ति, आनन्द और पवित्रता विद्यमान थी। माताओं द्वारा उनके यादगार स्वरूप को झूले में झुलाना इस बात का प्रतीक है कि श्रीकृष्ण सदैव ही अतीन्द्रिय सुख के झूलों में झूलते रहते थे। यह है उस दिव्य एवं अद्भुत चैतन्य हीरे का संक्षिप्त परिचय जो मानव हित में प्रेरणा का स्रोत है!

श्रीकृष्ण जयन्ती के इस शुभ दिन पर हमें भी अपनी अन्तर्निहित भावनाओं को सामने रखकर दृढ़ संकल्प और अटल निष्ठा से निष्पक्ष होकर अपने अन्दर गहराई से झांकना चाहिए कि हम कहाँ तक अपनी गौरवमय संस्कृति और सुसभ्यता का पालन कर रहे हैं? भाव यह है कि हमारे हितैषी श्रीकृष्ण की जो हमसे आश है, क्या उसे पूरी करने में हम स्वयं पुरुषार्थकौशल हैं? क्या हमारे मन में दया, क्षमा, उदारता, निष्छलता, स्वच्छता तथा मानव मात्र के प्रति स्नेह, सहानुभूति और सहयोग की भावना है? यदि हाँ, तो उन्हें और विकसित कर संस्कार बनाने में जुट जाओ। यदि नहीं, तो दृढ़तापूर्वक निश्चय करके इस शुभ अवसर पर श्रीकृष्ण जी के समक्ष प्रतिज्ञा करो कि हम इन दिव्यगुणों को धारण कर न दःख देंगे, न दुःख लेंगे तथा किसी भी स्थिति में मन में ईर्ष्या, द्वेष का जहर घुसने नहीं देंगे। बस, यही श्रीकृष्ण जयन्ती की सार्थकता होगी।

**अम्बेजोगाई (महाराष्ट्र)**– सेवाकेन्द्र पर आयोजित 'क्रियेटिव वर्कशॉप' में विभिन्न वर्गों के व्यक्ति 'सुखमय संसार' बनाने हेतु अपने-अपने विचार बताते हुए।

# अविनाशी प्राप्तियों का आधार— 'ईश्वरीय प्यार'

ब्र० कु० गोलक, आबू पर्वत

ब्रह्माण्ड के समस्त स्थूल एवं सूक्ष्म —सब एक अदृश्य सूक्ष्म आकर्षण शक्ति के आकर्षण से एक दूसरे को आकर्षित किये हुए हैं। सौर्य परिवार में यह चुम्बकीय आकर्षण के रूप में जाना जाता है। जिस पारस्परिक आकर्षण के द्वारा ग्रह, नक्षत्र तथा अन्य सभी सौर्य वंशावली गतिशील होकर दिन-रात और ऋतु परिवर्तन आदि कार्य सम्पन्न करते हैं। ऐसे ही मानव जीवन में इस सूक्ष्म शक्ति को प्यार कहा जाता है। जन्म से मृत्यु तक किसी न किसी रूप में मानव प्यार की सम्मोहन शक्ति से दुनिया की वस्तु वा व्यक्ति के आकर्षण में बन्धायमान रहता है। यह आकर्षण उसके जीवन में प्रकृत (यथार्थ) या विकृत रूप में हो सकता है। इस सूक्ष्म प्यार की आकर्षण शक्ति के प्रयोग की विधि द्वारा ही मनुष्य जीवन प्राप्ति वा सम्बन्ध के आधार पर गतिशील अर्थात् कर्म करने को प्रेरित होता है।

मानव का जीवन भौतिक एवं आध्यात्मिक शक्ति का एक सन्तुलित विकास होने के कारण सदा दोनों के आकर्षण से प्रभावित होता है। एक तरफ प्रकृति का सौन्दर्य एवं अपने जीवन में उसके उपयोगिता के आकर्षण, तो दूसरी तरफ आध्यात्मिक शक्ति चेतन 'आत्मा' की अविनाशी प्राप्ति से प्यार के सम्बन्ध का आकर्षण। जहां प्रकृति के पंच तत्व से बना यह शरीर वा इन्द्रियाँ परिवर्तनशील प्रकृति के सूक्ष्म आकर्षण से आकर्षित हैं; वहाँ चेतन आत्मा अविनाशी सुख शान्ति, आनन्द, गुण, शक्ति एवं सम्बन्ध और सम्पर्क की प्राप्ति के आकर्षण से प्रभावित है। उन दोनों आकर्षण से सम्मोहित होकर निराकार आत्मा साकार शरीर धारण कर कर्म करने के लिए अनुप्रेरित होती है।

प्यार का यह श्रेष्ठ बन्धन समय-क्रम में सर्व अन्य दुखदाई बन्धनों को तोड़ कर सुखद सम्बन्ध में परिवर्तित हो जाता है। क्योंकि प्यार आत्मा की वह सूक्ष्म चुम्बकीय शक्ति है जिसके आधार से आत्मा दूसरी आत्माओं को अपनी तरफ आकर्षित करती है एवं स्वयं आकर्षित होती भी है। जिस आकर्षण के प्रभाव से एक दूसरे के परिपूरक बन अपने आदि-अनादि स्वरूप में स्थित होकर श्रेष्ठ सम्बन्ध और स्वधर्म की विधि से कर्म क्षेत्र में प्रवेश करती है। जिस कारण सर्व प्रकार के क्षणिक इन्द्रिय सुखों से परे श्रेष्ठ अलौकिक अतीन्द्रिय सुख-शान्ति एवं आनन्द की प्राप्ति की श्रेष्ठ अनुभूति अपने जीवन में करती है। परिणामस्वरूप वह प्यार का आकर्षण दूसरों के साथ श्रेष्ठ सम्बन्ध में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार यह सम्बन्ध एक दूसरे का सहयोगी बन सामाजिक जीवन-धारा को चलाता है। जिस सम्बन्ध में सदा निश्चल, निःस्वार्थ, निष्काम प्यार की निरझरिणी बहती रहती है, उसके निर्मल जल में सदा पवित्र दृष्टि, वृत्ति वाले दैवी स्वरूप की परछाई दिखाई देती है। और उसकी जलधारा की कल-कल... आवाज़ में परमात्मा प्राप्ति की अनुभूति का मधुर संगीत सदा गूँजता रहता है।

प्यार ही एकमात्र आधार है जिसके द्वारा हम अपने जीवन में आध्यात्मिक शक्ति जागृत कर सकते हैं, क्योंकि प्यार अपने आप में सम्पन्न सम्पूर्ण होने के कारण सम्पूर्ण परमात्मा को सहज आकर्षित करता है। फलस्वरूप आत्मा ईश्वरानुभूति द्वारा परमानन्द को प्राप्त करती है। दुनिया में प्यार के सिवाए और कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो ईश्वर की प्राप्ति करा दे। इसलिए तो यह गायन है कि भक्त के प्यार में भगवान बिना मोल बिक जाता है। प्यार के आगे भगवान को भी झुकना पड़ता है। अपना पवित्र वतन छोड़कर साकार पतित सृष्टि में आना पड़ता है। देह का बन्धन न होते भी अपने बच्चों के प्यार के बन्धन में बंधकर ब्रह्मा के साकार तन द्वारा मात-पिता, बन्धु-सखा आदि सर्व सम्बन्ध से प्यार का एवज़ (रिटर्न) देता है। प्यार की विधि से ही प्यार के सागर परमात्मा को प्राप्त करना सहज है क्योंकि सच्चे प्यार में त्याग, समर्पण भावना, निरंहकारी भाव और निष्काम सेवा स्वतः और सहज जागृत होती है, जो कि आध्यात्मिक साधना में आवश्यक है।

जब हम अपनी प्यार की आकर्षण शक्ति को व्यवहार में लायेंगे अर्थात् दूसरों से प्यार का सम्बन्ध निभायेंगे तो प्यार स्वतः ही मिलेगा। साथ-साथ आपकी श्रेष्ठ स्मृति वा प्यार के प्रकम्पन्न से स्वतः ही अन्य आत्मायें एवं प्रकृति की तमोगुण

शक्तियाँ परिवर्तित हो जायेंगी। कितनी भी खराब वृत्ति वाली आत्मा हो, आपकी प्यार भरी श्रेष्ठ स्मृति, पवित्र दृष्टि एवं कल्याणकारी वृत्ति उसे परिवर्तित कर आपके प्यार की धारा में, प्यार के सागर की तरफ बहा ले जायेगी। इसलिए ही तो कहावत है–प्यार पत्थर को भी पानी कर देता है। भक्ति इसका प्रमाण है–भक्त शिरोमणि तुलसीदास, सन्त कबीर और भक्तिन सुन्दरी मीराबाई के जीवन में प्यार शक्ति के श्रेष्ठ स्वरूप का प्रयोग समग्र मानवता के लिए अनुकरणीय है।

लेकिन जब प्यार के प्रति मानव का दृष्टिकोण बदल जाता है, तो मानव इसका असन्तुलित प्रयोग कर अपने स्वार्थ, देह और देह की इच्छाओं की पूर्ति के लिए इसे व्यवहार में लाता है तो स्वयं के साथ दूसरों की जीवन-नैया को भी विषय सागर में डुबो देता है। स्वार्थ, दूषित विचार एवं इन्द्रियों की तृप्ति के लिए शक्ति का विपरीत प्रयोग करने के कारण अनेक प्रकार के कर्म बन्धन में बन्ध जाता है। अन्ततोगत्वा उसके पास प्रकृति के सर्व साधन, समाज के सर्व सम्बन्ध होते हुए भी वह अपने जीवन में प्यार के सच्चे स्वरूप को अनुभव नहीं कर पाता है क्योंकि सर्व सम्बन्ध उसके लिए बन्धन बन जाते हैं। वह सदा अपने को बन्धनी आत्मा महसूस करता है। अतृप्त इच्छाओं के कारण प्यार की भूख में तड़पता रहता है।

इसी प्रकार के प्यार के किस्से, कहानियाँ नित्य हम सब कितने सुनते रहते हैं जिसका परिणाम है तनाव, कलह-क्लेश, दुख-अशान्ति, युद्ध और मौत ! जिसके प्रभाव से आज समग्र मानवता प्रभावित है। व्यक्तिगत या गोष्ठिगत स्वार्थ, इन्द्रिय-लालसा, विकृत इच्छा को तृप्त करने के लिए आज का मानव प्यार के सुन्दर सलौने रूप पर अपने भ्रष्ट कर्म एवं अज्ञानता की कालिख लगाने में सिद्धहस्त हो गया है। उसने स्वयं के असली रूप को भूलने के साथ प्यार के असली स्वरूप को बदल डाला है। प्राप्ति के आधार से प्यार नहीं करना है। प्यार के आधार से प्राप्ति स्वतः ही होती है। प्राप्ति के आधार से या प्राप्ति की इच्छा से प्यार सच्चा प्यार नहीं रहता। प्यार अपने आप में निष्काम, पवित्र एवं निर्मल स्रोत है जो निरन्तर बहता रहता है। उसमें अपने स्वार्थ, अपवित्रता एवं कामना की मिट्टी मत डालो। सदा उसकी पवित्रता को कायम रखो।

आत्मा के साथ शक्ति शाश्वत एवं सत्य है, उसके प्रयोग की विधि-अनुकूल आपको अनुरूप प्राप्ति होती है। अगर आप अपने प्यार की शक्ति का प्रकृति के साधनों अथवा देह और देह के धर्म अनुकूल व्यवहार करेंगे तो आपको उस अनुरूप क्षणिक इन्द्रिय तृप्ति का सुख मिलेगा जिसके परिणाम से सभी अनुभवी हैं। लेकिन जब प्यार की शक्ति को अपने निजी गुण, धर्म, कर्म एवं सूक्ष्म विधि विधान से प्रयोग करेंगे तो आप प्यार का सच्चा स्वरूप एवं आध्यात्मिक जगत की सर्व सूक्ष्म शक्तियों के अधिकरी होने के साथ अलौकिक अतीन्द्रिय सुख, शान्ति, आनन्द का निरन्तर अनुभव करते रहेंगे। यही अनुभव परमात्म-अनुभूति एवं परमानन्द प्राप्ति करने की विधि बन जायेगा क्योंकि प्यार स्वयं आध्यात्मिक शक्ति है। आत्मिक प्यार सदा सर्व हदों से परे बेहद सम्बन्ध एवं परमात्मा के बेहद ज्ञान, गुण, शक्ति, सम्पत्ति की प्राप्ति कराता है। दुनिया के सर्व सम्बन्ध और सम्पर्क तथा धर्म और कर्म उसके लिए आदि-अनादि आत्मिक सम्बन्ध बन जाते हैं। स्वयं आकर्षक मूर्त बन वह अपनी प्यार भरी दृष्टि, वृत्ति, सम्बन्ध, सम्पर्क, कर्म, व्यवहार एवं शुभ भावना और शुभ कामना से सर्व को प्यार देकर आकर्षित करता है। परन्तु स्वयं सदा प्यार के सागर 'शिव पिता' के प्यार में तल्लीन रहता है। ईश्वर के बेहद प्यार के सामने सर्व हदों के प्यार की आकर्षण एवं स्वयं के प्यार को भी समर्पण कर अपने को कुर्बान करते समय वह यही गीत गाता है– जो पाना था सो पा लिया, अब पाने को कुछ नहीं रहा।

पुरी– सेवाकेन्द पर आयोजित एक स्नेह-मिलन कार्यक्रम में पधारे फादर पीटर, फादर थोमस तथा अन्य ब्र० कु० निरूपमा बहन के साथ एक ग्रुप फोटो।

# ईश्वरीय आनन्द

ब्र० कु० कर्ण सिंह, पानीपत

ईश्वरीय आनन्द या परमानन्द बहुत पुराना शब्द है। पुराने से पुराने ग्रन्थ में व इतिहास में यह सुन्दर शब्द पढ़ने को मिलता है जिसकी प्राप्ति के लिए बड़े-२ राजा-महाराजाओं ने राज्य भाग्य को ठोकर मार त्यागी व तपस्वी जीवन अपनाया था और सब प्रकार की सुख-सुविधाओं को एक किनारे रख दिया था। आखिर वो परमानन्द क्या है? परन्तु आज कोई परमानन्द अर्थात् ईश्वरीय आनन्द की बात कहता है तो लोग उसे रूढ़ीवादी कहते हैं और उसे मज़ाक अर्थात् कल्पित बात समझते हैं, आखिर ऐसा क्यों ?

देखिए, जिसने मिश्री का स्वाद लिया है वो सदा ही मिश्री के स्वाद के मीठा कहेगा—चाहे उसे कितना भी झूठे दृष्टांत दें, परन्तु वह मानेगा नहीं। दूसरी तरफ, जिसने फिटकरी के स्वाद को लिया है वह सदा ही मिश्री को भी फिटकरी समझ कर फैंकता रहेगा जब तक कि वह चख कर ना देख ले। परन्तु जिस प्रकार किसी ने ज्यादा फिटकरी खाई हो और इस कारण मुँह भी अन्दर से फट गया हो और उस हालत में आप उसे मिश्री खाने के लिए दें, तो भी वह व्यक्ति मिश्री को भी फिटकरी ही समझेगा और लाख प्रयत्न करने पर भी वह मिश्री को नहीं खाएगा। ठीक यही हालत आज इन्सान की है। आज इन्सान अपने को भौतिक समझ, भौतिक सुखों का स्वाद लेता हुआ इतना अशान्त हो गया है कि वह ईश्वरीय आनन्द को भी नहीं समझ पा रहा है।

### ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति कैसे हो?

जिस प्रकार स्थूल नशे वाले व्यक्ति की रगों में नशा, विकारी व्यक्ति की रगों में विकार भर जाने पर वह परवश हो जाते हैं और नशे वाले व्यक्ति को हर समय नशा ही नज़र आता है। इतना परवश हो जाता है कि छोड़ना चाहता हुआ भी छोड़ नहीं सकता है। वह समझता है कि मेरा तो जीवन ही नशा है। इसी प्रकार ईश्वरीय ज्ञान का मनन-चिन्तन इतनी गहराई से करें कि वह हमारी रगों में पहुंच जाए, हर समय ईश्वरीय याद, ज्ञान और सेवा ही दिखाई दे। फिर आप देखना कि जीवन कितना आनन्द से भरा अनुभव होता है! हर समय ईश्वर पिता व उसकी सेवा की ओर कोशिश होती रहेगी। ऐसा अनुभव होगा कि मैं ईश्वरीय दुआओं से, ईश्वरीय वरदानों से पल रहा हूँ! मन-तन में एक ऐसी सुन्दर लहर फैल जाएगी कि अपना मन कहने लगेगा कि बस, जीवन है तो यह ईश्वरीय जीवन है ! यही ईश्वरीय आनन्द है। इस ईश्वरीय आनन्द को सदा कायम रखने के लिए हमें इन बातों पर ध्यान देना होगा :—

### जैसा समय वैसा स्वरूप

कई बार बापदादा ने कहा है कि कई बच्चे पुरुषार्थ बहुत अच्छा करते हैं परन्तु चतुर सुजान बन जाते हैं। जहाँ बाप का कार्य है वहाँ स्वयं करने लग पड़ते हैं और जहाँ स्वयं करना है वहाँ बाप के ऊपर रख देते हैं कि आप करो। समय होता सहन करने का, वहाँ सामना करते हैं जिससे ईश्वरीय आनन्द में कुछ कमी अनुभव होती है

### अन्तर्मुखता

अन्तर्मुखता मानो सोने का बर्तन है जिसमें ज्ञान-अमृत न केवल ठहरता ही है बल्कि देखने में सुन्दर व चमकीला लगता है और दूसरों को कशिश करने वाला होता है। इसके विपरीत बाह्यमुखता एक कच्ची मिट्टी के बने हुए बर्तन के समान होता है जिसमें ज्ञान-अमृत डालने से वह बर्तन कुछ ही समय में गल कर टूट जाता है। सारा ज्ञान-अमृत न केवल बर्बाद हो जाता बल्कि मिट्टी से मिलकर कीचड़ बन जाता है, जिससे सभी नफ़रत करते हैं। इसलिए अन्तर्मुखी व्यक्ति ही ईश्वरीय आनन्द को कायम रख सकता है।

### सँग

कहावत है कि संग तारे कुसंग बोरे। पारस के संग में आकर लोहा भी सोना बन जाता है परन्तु विष के संग में आकर अमृत भी विष बन जाता है। जिस प्रकार भ्रमरी के संग में आकर कीड़े को भी पंख लग जाते हैं और वह भी उड़ने लगता है। इसी प्रकार ऐसी ऊँच व महान् आत्माओं का संग हो जिससे जीवन में नया उमंग-उत्साह बढ़ता रहे। तो ही ईश्वरीय आनन्द निरन्तर कायम रह सकता है।

### स्वमान

ईश्वरीय आनन्द में विघ्न व रूकावटों को पार करने लिए 'स्वमान' एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण साधन है। ईश्वरीय आनन्द में पहली रूकावट लोकलाज है। समाज, रिश्तेदार, परिवार वाले जब हम पर ताने कसते हैं अर्थात् हमारा मज़ाक करते हैं या हमारा साथ छोड़ देते हैं तो मन में आ

सकता है कि थोड़ी तो समाज की भी माननी पड़ेगी, आखिर रहना तो समाज में ही है इस प्रकार के विचार की बजाय हमें सोचना चाहिए कि मैं तो सर्वशक्तिवान भगवान् की सन्तान हूँ, गुप्त रूप में अवतरित हुई देव आत्मा हूँ। आखिर यह सब मन्दिरों में मेरी ही यादगार है। जिस प्रकार कोई बहुत ऊँचा आफीसर साधारण वस्त्र पहन कर जा रहा हो तो लोग उसे साधारण समझेंगे परन्तु वह आफीसर अपने स्वमान में ही स्थित रहता है। ठीक इसी प्रकार से हमें भी हर समय यही सोचना है कि इस साधारण वेष में मैं अवतरित हुई देव आत्मा हूँ, अभी जल्दी ही मेरे भक्तों की मेरे सामने भीड़ लगने वाली है। स्वयं भगवान् बाप भी मेरे लिए इस धरा पर आए हैं। इस प्रकार स्वयं से मीठी-२ रुहरिहान कर स्वमान में स्थित रहने से ईश्वरीय आनन्द कायम रह सकेगा।

### मनन चिन्तन

ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति के लिए तथा इसे कायम रखने के लिए मनन-चिन्तन अर्थात् शुभ व श्रेष्ठ चिन्तन बहुत-बहुत ज़रूरी है। जिस प्रकार, घोड़े को सदा चुस्त व तज रखने के लिए उसे घुमाना-फिराना जरूरी है, मशीनरी को सचारू (In working condition) रखने के लिए उसे चलाना जरूरी है। इसी प्रकार ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति के लिए व उसे निरन्तर कायम रखने के लिए ज्ञान रत्नों का मनन व शुभ-चिन्तन बहुत जरूरी है। ऐसा गहराई से मनन करें कि हमें महसूस हो कि जिस प्रकार चुम्बक लोहे को खींचता है इसी प्रकार ईश्वर पिता हमारे मन को खींच रहा है। जिस आत्मा को मनन-चिन्तन करने की आदत पड़ जाती है, उसे हर समय ऐसा अनुभव होगा जैसे कि मुख में मिश्री रखी हुई है और वह उसका रस ले रहा है। दिल करता है कि यह मिश्री जिह्वा पर सदा रखी रहे। इसी प्रकार ईश्वरीय ज्ञान-मनन का स्वाद व अनुभव होने लगता है तो दिल करता है कि सदा इस अनुभव में ही स्थित रहूँ। मन कहीं दूसरी तरफ भागता ही नहीं है। ईश्वरीय ज्ञान की गहराई में जाने से व मनन-चिन्तन करने से जो सुन्दर अनुभव प्राप्त होता है उसे पाकर बार-बार मनन करने को दिल करता है और इस प्रकार ईश्वरीय आनन्द सदा कायम रहता है।

### धारणाएं, नियम व परहेज

ईश्वरीय नियम व मर्यादा पर चल कर ही हम महान् बन सकते हैं। जिस प्रकार कोई बीमार व्यक्ति बहुत बड़े सर्जन से इलाज करा रहा हो, दवाई ले रहा हो, परन्तु सर्जन के बतलाए हुए परहेज कोई भी नहीं रखता हो तो भला वह व्यक्ति कैसे स्वस्थ हो सकता है? तथा सदा बीमार रहने के कारण उसके दिल में कैसे खुशी रह सकती है? वह तो सदा उदास व आशाहीन ही बना रहेगा। इसलिए ईश्वरीय परहेज को अपना कर ही हम ईश्वरीय आनन्द को निरन्तर कायम रख सकते हैं।

# अद्वितीय

प्रथम है आत्मा, शरीर है द्वितीय।
लेकिन 'देही-अभिमानी' होना है अद्वितीय।।
देही-अभिमानी जग में यों रहें,
कमल पुष्प कीचड़ में ज्यों रहे।
उनके हर संकल्प, कर्म और बोल में,
उनके हर माप-दण्ड और तोल में,
यथार्थता है नित्य।
प्रथम है मंसा, वाचा है द्वितीय।
लेकिन देही-अभिमानी होना है अद्वितीय।।
देही-अभिमानी स्वमान में यों रहें,
कोहीनूर शोभायमान ताज में ज्यों रहें।
उनके हर नैन, बैन और चैन में,
उनके खान-पान और रहन-सहन में,
रूहानियत है नित्य।
प्रथम है धारणा, सेवा है द्वितीय।
लेकिन देही-अभिमानी होना है अद्वितीय।।
देही-अभिमानी शक्ति सम्पन्न यों रहें,
प्रत्यंचा पर चढ़ा हुआ शर ज्यों रहे।
उनकी हर दृष्टि, वृत्ति और कृति से,
उनकी हर रीति-नीति और स्मृति से,
सेवा है निश्चय।
प्रथम है रचयिता, रचना है द्वितीय।
लेकिन देही-अभिमानी होना है अद्वितीय।।

**ब्र० कु० सुमन, जयपुर (म्यूजियम)**

# "शुभ भावनाओं की शक्ति"

ब्र० कु० आत्मप्रकाश, आबू-पर्वत

सदा सर्व आत्माओं के प्रति शुभ भावनाएँ रखना ही महान् आत्माओं की महानता है। ऐसे महान् व्यक्तियों का ही संसार आदर करता है। वास्तव में अशुभ भावनाएं कार्य-सिद्धि के मार्ग बीच निन्दनीय भावनाएँ हैं और यह हमारी कार्य-सम्पादन शक्ति को समाप्त कर देती हैं, हमारे आगे बढ़ने के मार्ग में अड़चनें पैदा करती हैं। इसलिए अपनी उन्नति का मार्ग सरले बनाने के लिए अशुभ भावनाओं को त्यागना नितान्त आवश्यक है।

अपने कमरे में बैठे अमित के मुखमण्डल पर आज बदला लेने की भावना स्पष्ट दिखाई दे रही थी। उसके मस्तिष्क में विचारों का तूफ़ान-सा उठ रहा था। इतनें में उसका परम हितैषी मित्र ब्र० कु० अजीत कमरे में प्रवेश करता है।

**अजीत**-क्या बात है अमित, किन ख्यालों में खोये हुए हो?

**अमित**-(कटु स्वर में)-आज उस बदतमीज सुनील पर मुझे रह-रह कर गुस्सा आ रहा है। उसका कभी भी भला नहीं होगा, वह बेमौत मरेगा····

**अजीत**-सुनील पर इतना गुस्सा करने का क्या कारण है?

**अमित**-(क्रुद्ध स्वर में)-कल उसने २०–२५ कॉलेज के सहपाठियों के बीच मेरी बेइज्ज़ती की, मैं उसका बदला लेकर ही रहूँगा।

**अजीत**-(गंभीरता से)–अमित, किसी के प्रति ऐसा अशुभ नहीं सोचना चाहिए। ये महानता नहीं है।

**अमित**-तो उसने मुझ से ऐसा अभद्र व्यवहार क्यों किया?

**अजीत**-अगर कोई मूर्ख बनता है तो क्या हम भी मूर्ख बन जाएँ? आप तो समझदार हो, समझदार का काम है श्रेष्ठ व्यवहार करना।

**अमित**–लेकिन भैया, यदि कोई हमारे साथ अभद्र व्यवहार करता है, तो क्या उसका बदला नहीं लें?

**अजीत**-अमित, बदला लेने की भावना रखना महान् आत्मा का लक्षण नहीं है। हम स्वयं बदलें। दूसरों के साथ ऐसा श्रेष्ठ व्यवहार करें जिससे दूसरा स्वयं अपनी कमी महसूस करके बदल जाये।

**अमित**-ये कैसे हो सकेगा ?

**अजीत**-इसकी युक्ति है–उस व्यक्ति के प्रति सदा शुभ भावना रखना। शुभ भावना से तो शत्रु को भी मित्र बनाया जा सकता है। शुभ भावनाओं में बड़ी भारी शक्ति है। हमारी शुभ भावनाएँ दूसरों को परिवर्तन न करें–ये हो नहीं सकता।

**अमित**–भैया, शुभ भावना का अर्थ क्या है ?

**अजीत**-शुभ भावना अर्थात् श्रेष्ठ भावना। जैसे–सबका सदा भला सोचना, सदा सभी आगे बढ़ते रहें–ऐसी ऊँची भावना रखना।

**अमित**–भैया, इसको अपनाने के लिए क्या पुरुषार्थ करना चाहिए ?

**अजीत**-इसके लिए हम सदा शुभचिन्तक बनें। शुभचिन्तक वही व्यक्ति बन सकता है जो शुभ चिन्तन से भरपूर हो। अशुभ भावनाएँ मन में उत्पन्न होना अपवित्रता की अर्थात् कामाग्नि की प्रतीक हैं और मन में सदा शुभ भावनाएँ रखना पवित्रता की प्रतीक हैं।

**अमित**-फिर तो सम्पूर्ण पवित्रता की मंजिल पर पहुँचने के लिए भी शुभ भावनाएँ रखना परमावश्यक है?

**अजीत**–इसमें कोई सन्देह नहीं है। इसलिये हमने दूसरों के लिए जो अपनी भिन्न-भिन्न बुरी भावनाएँ व गलत दृष्टिकोण बना कर रखे हैं, उन्हें बदल हम सबके लिए आत्मिक भाव या महानता का भाव धारण करें। वास्तव में दूसरों को उनकी बीती हुई बातों के अनुसार देखना भी पाप है।

**अमित**–लेकिन भैया, हर व्यक्ति के प्रति शुभ भावना रखना जरा मुश्किल लगता है। जो अच्छा व्यक्ति होता है उसके प्रति स्नेह, प्यार की भावना स्वतः रहती है। लेकिन जो कुरुप होता है उसके प्रति घृणा-भाव उत्पन्न होता है। उस समय क्या करें?

**अजीत**–देखो अमित, छोटा हो या बड़ा, अमीर हो या गरीब, पढ़ा-लिखा हो या अनपढ़, सुन्दर हो या कुरुप, मित्र हो या शत्रु–सभी के प्रति हमारा समभाव हो। जैसे बहती नदी के पास जो भी व्यक्ति जाता है, वह भेदभाव न रखकर सभी की प्यास मिटाती है। वह कभी यह नहीं सोचती कि मुझे अमीर को ही पानी देना है, गरीब को नहीं। ऐसे ही हम सभी के प्रति समभाव रखकर सेवा करते रहें।

**अमित**–भैया, इस ऊँच धारणा को मैं अपने जीवन का अंग जरूर बनाऊँगा। लेकिन कोई हमारे से आगे जाता है तो ईर्ष्या-वश किसी न किसी प्रकार की अशुभ भावना उसके प्रति जागृत होती है, ऐसी परिस्थिति में क्या करें ?

**अजीत**–सदा यह समझें कि वह हमारे बेहद ईश्वरीय परिवार का एक सदस्य है, उसका आगे बढ़ना अर्थात् अपने परिवार की शान बढ़ना है। और भी उसकी दिन-दूनी और रात-चौगुनी उन्नति होती रहे – ऐसी शुभ-भावना रखने से उन्हें सूक्ष्म सहयोग मिलता है। वास्तव में सहयोग देने वाली अर्थात् दातापन के संस्कार वाली आत्माएँ तो स्वतः ही आगे होती हैं क्योंकि वे हदों से निकल कर बेहद में रहते बेहद उन्नति को पाती हैं।

इसके विपरीत, अशुभ भावनाएँ रखने से तो हमारी शक्तियाँ उसी तरह नष्ट हो जाती हैं, जैसे श्रापित होने पर। ऐसी संकुचित भावना रखने वाली आत्माएँ तो आगे बढ़ने का स्वप्न भी नहीं देख सकती हैं और प्रभु के दिल-पसंद बनकर उनका सूक्ष्म सहयोग पाने से वंचित रहती हैं अर्थात् दूसरों को श्रापित करने के बजाय स्वयं ही श्रापित हो जाती हैं।

**अमित**–भैया, इसका मतलब शुभ भावनाएँ रखने से हमें भी और दूसरों को भी फायदा होता है।

**अजीत**–हाँ, शुभ भावनाएँ अपने और दूसरों के चित्त को सदा शीतल रखती हैं। शीतल चित्त वाला ही सदा उन्नति को पाता है। दूसरी बात शुभ भावना दूसरों की जिज्ञासा और ग्रहण शक्ति को बढ़ाती है, दूसरों की कमजोरियों को समाप्त कर श्रेष्ठ भावनाएँ प्रज्जवलित करती है।

**अमित**–अजीत भैया, हम कैसे समझें कि हमारी शुभ भावनाएँ काम कर रही हैं या नहीं ?

**अजीत**–दूसरों के स्नेह द्वारा। क्योंकि शुभचिन्तक आत्मा को सर्व का स्नेह और सहयोग स्वतः ही प्राप्त होता रहता है। अगर दूसरों का स्नेह अनुभव नहीं होता तो समझें कि हमारी शुभ भावनाओं की कमी है।

**अमित**–भैया, अगर किसी व्यक्ति को हमारी उन्नति देखकर ईर्ष्या होती है और वह कभी विघ्न रूप भी बनता है, ऐसे व्यक्ति के प्रति शुभ भावना कैसे रखें ?

**अजीत**–अमित, चाहे कुछ भी हो, तनिक भी हमारी शुभ भावनाएँ कम न हों। और भी उस आत्मा को हम रहम की भावना से देखें और सोचें कि यह अज्ञान-वश ऐसा कर रहा है। उसका इसमें कसूर नहीं है बल्कि मेरा कसूर है। मेरी शुभ भावनाओं का प्रकाश इतना तेज नहीं है जो उसकी अशुभ भावनाओं रूपी अन्धकार को मिटा दे। इसलिए उस आत्मा के प्रति शुभ भावना रखना जारी ही रखें। तो वह विघ्न रूपी रोड़ा हमारे मार्ग से हट जाएगा अर्थात् प्रतिद्वन्दी भी हमारा शुभचिन्तक बन जाएगा।

**अमित**–भैया, कभी-कभी हमारी शुभ भावनाओं का प्रभाव दूसरों पर क्यों नही पड़ता ?

**अजीत**–हमारे शुभ भावनाओं का प्रभाव तब नहीं पड़ता जब उनमें हमारा स्वार्थ होता है, जब हमारी भावनाएँ हद की होती हैं, जब हमारे अन्दर पवित्रता और योग का बल नहीं होता, जब आत्मिक दृष्टि का बल नहीं होता।

**अमित**–भैया, दूसरों की शुभ भावनाएँ प्राप्त करने के लिए हमें कौनसा पुरूषार्थ करना चाहिए ?

**अजीत**–दूसरों की शुभ भावनाएँ उनको मिलती हैं जो निःस्वार्थ मेहनत करते हैं, जो सभी के स्नेही होते हैं, जो सभी को सुख देते हैं, जो किसी को भी बुरा बोल बोलकर दुःखी नहीं करते हैं। वास्तव में शुभ भावनाओं का आदान-प्रदान करना ही सच्चे ज्ञानी का लक्षण है। शिवबाबा ने भी बताया है कि जब सभी ब्राह्मण बच्चों की सभी के प्रति शुभ भावना होगी, तब सतयुगी दुनिया समीप अनुभव होगी।

**अमित**–अजीत भैया, आपकी ये अनमोल बातें सुनकर आनंद की अनुभूति हो रही है!

**अजीत**–अमित, हमें सभी को शुभ भावनाओं का बल देना है क्योंकि संसार को आज हम शुभचिन्तक मणियों की अत्यन्त आवश्यकता है। हम कभी भी शुभ भावनाओं का महादान करने में कंजूसी न करें। सदा हमारे शुभ भावनाओं के भण्डार भरपूर हों जिससे हम अनेक आत्माओं की मन्सा-सेवा करके उनको सुख और आनंद की अनुभूति करा सकें।

**बहमपुर**– आध्यात्मिक संग्रहालय का अवलोकन करने पश्चात् बहन खलीकोट रानी, एम०एल०ए०, ब्र० कु० कुलदीप तथा अन्य के साथ एक ग्रुप फोटो में।

# ईश्वर बिन्दु-स्वरूप ही क्यों?

ब्र० कु० तरसेम लाल, रायगढ़

बिन्दु को शून्य अथवा गोलाकार रूप में लिखा जाता है। इसी तरह ईश्वर को लगभग सभी धर्मों में ज्योति-बिन्दु अथवा गोलाकार रूप दिया गया है। भारत में शिवलिंग, ओम (ॐ) हिन्दुओं में, सिक्खों में ੴ का ऐसा ही रूप है। ईसाई भाई भी ईश्वर को काइन्डली लाईट (Kindly light) अर्थात् ज्योति कहते हैं। ज्योति का रूप भी गोलाकार अथवा शून्य ही है।

### अंडाकार आकृति के गुण

अगर हम प्रकृति को गहराई से देखें तो सभी जीवित प्राणियों के अंडे इसी आकृति के हैं। सभी पौधों के बीज भी लगभग इसी आकार (डिम्ब) के हैं। इस तरह सभी उत्पादक इसी आकार के हैं। चूँकि परमात्मा भी सभी आत्माओं का पिता है, तो यह स्वाभाविक ही है कि वह भी ऐसा ही होगा (है)। किन्तु इसके पीछे युक्तिपूर्वक कथन क्या है ? ओले, पानी की बूँदें और दूसरी छोटी बूँदें भी गोलाकार ही होती हैं। एक परमाणु से लेकर पृथ्वी, चाँद, सूर्य आदि और उनके घूमने का पथ भी अंडाकार है। इसलिए मनुष्य के लिए यह एक आश्चर्यजनक बात तो है ही कि ये सब ऐसे क्यों ?

हम जो सरल रेखा भी देखते हैं, सत्य तो यह है कि वह भी एक सरल रेखा न होकर किसी वक्र रेखा का ही अंश है। सूक्ष्म जगत से लेकर संपूर्ण संसार, हर वस्तु वक्र रेखा अथवा शून्य की तरह ही है। क्या यह अजीब बात नहीं लगती! आखिर इसका अर्थ क्या है? भौतिकी और रेखागणित के अनुसार यह अधिक को कम में समाने का सिद्धांत है। इस तरह आध्यात्म के विषयानुसार आत्मा और परमात्मा को भी अंडाकार कह सकते हैं क्योंकि दोनों ही सर्वाधिक ऊर्जा से भरे पड़े हैं। यह कभी खाली या अन्त न होने वाली ऊर्जा है जिसका केन्द्र बिन्दु है।

### परमात्मा की तुलना शून्य से

शून्य की कुछ खास विशेषताएँ हैं जो परमात्मा की विशेषताओं के समानान्तर हैं। उदाहरण के तौर पर 'शून्य' गुणों के अनुसार न ऋण (Negative) है, न धन (Positive)। इसी तरह परमात्मा भी सुख-दुःख और जीवन-मरण से परे हैं। गणित में भी ऋण और धन के चिह्न किसी भी क्रिया में शून्य पर कोई प्रभाव नहीं डालते। शून्य स्थिर, निश्चल है और इसी तरह परमात्मा भी। ठंडा और गर्म अथवा आराम और थकावट, भूख और तृप्ति उसे बदल नहीं सकते। वह परमात्मा है, था और रहेगा। उसके स्वाभाविक गुण स्थिर एवं अचल हैं।

वाणिज्य और गणना (हिसाब-किताब) में शून्य का अर्थ है—न लाभ, न हानि। इसका अर्थ है हिसाब-किताब बराबर। इसी तरह ईश्वर भी लाभ और हानि से दूर है। उसको भी न किसी का लेना है, न देना है। उसके कर्मों का हिसाब-किताब बिल्कुल संतुलित है। इसलिए वह ब्लिसफुल (Blissful) और कर्मातीत अवस्था में है।

जब शून्य से किसी संख्या को गुणा करते हैं तो सब शून्य हो जाता है अर्थात् अपनी तरह का ही बना लेता है। बस, ऐसा ही परमात्मा के साथ है। जो कोई भी बार-बार (Multiple) उसके सम्पर्क में आता है, तो वह भी उसी की तरह का (अशरीरी) हो जाता है। जब किसी संख्या को शून्य से विभाजित करते हैं तो वह संख्या अनन्त (असीम) हो जाती है। अगर हम अपनी सारी सम्पत्ति (जायदाद) परमात्मा से विभाजित करें यानि ईश्वर को भाजक (नियुक्त पुरुष, Denominator. Nominee) बनाएँ तो सारी सम्पत्ति ही अन्नत (असीम) हो जाती है।

शून्य को सिफर (Cypher) भी कहते हैं जिसका अर्थ है गुप्त। परमात्मा भी गुप्त है, इसलिए इसे जानना और पहचानना पड़ता है। शून्य में बहुत शक्ति है। जब यह किसी संख्या के उचित (दांई ओर) लग जाता है तो उसका मान दस गुणा कर देता है। इसी तरह अगर परमात्मा भी किसी के Right (उचित, दाई) ओर लग जाये तो उसकी आत्मिक शक्ति और गुण दस गुणा हो जाते हैं। अगर आत्मा उसे अपनी दाईं ओर अर्थात् श्रीमत (Right Direction) पर रखे तो कितनी शक्तिशाली बन सकती है।

इस विषय को जितना चाहें उतना लम्बा किया जा सकता है। संक्षेप में शून्य से परमात्मा को दर्शाना उचित है, इतना कहकर अन्त करता हूँ। जहाँ-कहीं शून्य देखो परमात्मा को याद कर अपनी शक्ति में दस गुणा बढ़ोतरी करो।

# राजयोगी बन मन, इन्द्रियों के राजा बनो

ब्र० कु० आर० एल० श्रीवास्तव, रायपुर

कलियुगी राजा मन, इन्द्रियों का गुलाम होता है, राजयोगी मन, इन्द्रियों का राजा होता है। इनमें से कौन श्रेष्ठ है—राजा या राजयोगी? क्या बनने में लाभ है—राजा या राजयोगी? मन और इन्द्रियों के सुख भोगने के बाद दुःख आता है। राजयोगी चूँकि इन सुखों से दूर रहता है, अतएव उसके पास दुःख होता ही नहीं। कौन श्रेष्ठ हुआ—राजा या राजयोगी? राजा बनने की तमन्ना सबको होती है, राजयोगी बनने की इच्छा देवात्माओं को होती है। जो आत्माएं राजा कभी बनी थी वे ही आत्माएं पुनः राजा बनने की इच्छा रखती हैं।

परमपिता परमेश्वर प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय के माध्यम से सभी आत्माओं को राजाओं के राजा 'राजयोगी' बनाने के लिए इस धरती पर आ चुके हैं। वे आत्मा को राजाओं का राजा राजयोगी बना रहे हैं। समझदार इस रहस्य को समझकर झटपट राजयोगी बन रहे हैं, नासमझ इस विद्या को अविद्या कह इसका उपहास कर रहे हैं। अन्त में नुकसान किसका होगा? जो राजयोगी बन जायेगा उसका या जो राजयोगी नहीं बन पायेगा उसका?

क्या राजा, क्या प्रजा—सभी मन, इन्द्रियों के गुलाम हैं। मन और इन्द्रियों के शासन से कोई भी आत्मा स्वतन्त्र नहीं। मन और इन्द्रियों का शासन दुःशासन है। यह दुःशासन आत्मा को गुलाम बनाता है, दुःखी बनाता है, अंधकार में ले जाता है और विकारी बनाता है। राजयोगी की आत्मा इन सब से बच जाती है और राजाओं का राजा बन श्रीकृष्ण सम ५ फन वाले नाग पर भी नृत्य करती है और विष्णु समान नाग-शैय्या पर चैन से सोती है। परमपिता परमेश्वर ने ऐसा विश्वविद्यालय खोला है जहाँ राजयोगी बनने की शिक्षा दी जाती है, जिससे आत्माएं २१ जन्मों तक राज्य भाग्य भोगती रहें।

आज की शिक्षा हम इसीलिए लेते हैं कि हम उस शिक्षा के बल पर पद पाकर ऐशो-आराम का जीवन व्यतीत करेंगे। लेकिन वह जीवन मन, इन्द्रियों की गुलामी का जीवन होता है। ईश्वरीय विश्वविद्यालय के विद्यार्थी का जीवन मन, इन्द्रियों की गुलामी का जीवन नहीं होता। इसका जीवन राजाओं के राजा का जीवन होता है। वह स्वर्ग का मालिक बनना सीखता है। वह विश्व का मालिक बनना सीखता है। वह मन, इन्द्रियों का मालिक बनना सीखता है। अब कोई भी सोचे कि किस पढ़ाई में कितनी कमाई है? जीवन और समय किसमें लगाना चाहिए और कौनसी पढ़ाई पढ़नी चाहिए? पढ़ाने वाला जब स्वयं परमात्मा है तो यह पढ़ाई कितने अच्छे ढंग से पढ़नी चाहिए!

इस प्रकार की पढ़ाई ५००० वर्ष में आत्मा एक ही बार पढ़ पाती है। यह पढ़ाई जो अभी नहीं पढ़ेगा वह ५००० वर्ष तक यह पढ़ाई नहीं पढ़ सकेगा। ध्यान रखना है कि ५००० वर्ष तक का घाटा किसका होगा? अभी भी समय है, जल्दी करो। अन्यथा टू लेट (Too late) का बोर्ड लग जायेगा।

**बुरहानपुर**— गांव संग्रामपुर में आयोजित 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का उद्घाटन ब्र० कु० सुधा बहन तथा सरपंच भ्राता राजनकार जी दीप जलाकर कर रहे हैं।

**क्योंझर (उड़ीसा)**— 'कार-उत्सव' के अवसर पर आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन भ्राता एन०सी० मिश्रा, मुख्याध्यापक जी रिबन काटकर कर रहे हैं।

# मायाजीत बनने का साधन – 'योगबल'

ब्र० कु० कृष्णा, बिलासपुर

ज्ञान मार्ग में सदैव आगे बढ़ते रहें–इसके लिए 'अटेन्शन' और 'प्रतिज्ञा' ही सफलता के साधन हैं। इसके लिए मनन चिंतन करना चाहिए। कोई भी मुरली 4-5 बार पढ़ें तो मनन स्वतः ही चलने लगेगा। फिर श्रेष्ठ संकल्पों पर भी अटेन्शन देना जरूरी है, तभी हम व्यर्थ से बच सकेंगे। यह मार्ग रोचक तब होगा जब हमारा कोई साथी हो। तो हमारा सच्चा साथी कौन? सच्चा साथी है केवल एक परमात्मा। ऐसे साथी को साथ रखने का सहज साधन है– साक्षी होकर रहना। साक्षी होकर स्वयं को देखो तो प्रगति होती जाएगी। साक्षी अर्थात् अपने आपको साकार दुनिया से बाहर न्यारा समझना। इसके लिए अभ्यास चाहिए। इस अभ्यास के लिए अन्तर्मुखी होकर रहना ज़रूरी है, तभी बाप के साथ का अनुभव हो सकता है। हम आगे बढ़ते रहें–इसके लिए शक्ति चाहिए। आत्मा, परमात्मा की रीयल्टी (Reality) भी एक शक्ति है। मैं बाप समान अवतरित आत्मा हूं–यह सदैव स्मृति में रहे तो शक्ति की अनुभूति होगी।

परन्तु जैसे-जैसे हम इस पथ पर आगे बढ़ते हैं, माया मार्ग में बाधा डालती है। इसीलिए बाबा ने कहा भी है– "बच्चे, माया से तो तुम्हें लड़ना ही पड़ेगा। परन्तु तुम विजयी तब होंगे जब सर्व शक्तियों का स्टॉक जमा होगा।" इसी सन्दर्भ में मुझे एक कहानी याद आ रही है जो इस प्रकार है :–

किसी राज्य में एक राजा था जिसका सेनापति युद्ध में मारा गया। अब राजा को नये सेनापति का चुनाव शीघ्र ही करना था। सेनापति बनने के लायक दो व्यक्ति ही राजा को नजर आये–एक राजकुमार, दूसरा मंत्री-पुत्र। दोनों में से चुनने के लिए उसने पहले राजकुमार को 6 माह के लिए सेनापति नियुक्त किया। इस छः माह में उस राज्य पर पड़ौसी देश ने दो बार आक्रमण किया। दोनों बार राजकुमार को विजय मिली। जब मंत्री-पुत्र की बारी आयी तो उसने सैन्य शक्ति को बढ़ाना शुरू किया। सेनाओं को ट्रेनिंग देने के लिए कैम्प लगवाये। नये-नये अस्त्र-शस्त्रों की वृद्धि की। मंत्री-पुत्र के काल में कोई भी आक्रमण नहीं हुआ। राजा ने सोच-विचार कर मंत्री-पुत्र को अपनी सेना का सेनापति नियुक्त कर लिया।

तब मंत्री ने राजा से पूछा–'महाराज, आपने राजकुमार की वीरता और रण-कौशल देखा, उसने दोनों आक्रमण में राज्य को विजय-श्री दिलवाई। किन्तु मेरे पुत्र ने कोई भी लड़ाई नहीं की। फिर उसकी वीरता देखे बिना उसे कैसे सेनापति नियुक्त किया?' राजा ने उत्तर दिया–'आपके पुत्र ने सेनापति बनते ही सैन्य-शक्ति बढ़ानी शुरू की, सेना को ट्रेनिंग दी। इस प्रकार राज्य की बढ़ती हुई सैन्य शक्ति को देखकर पड़ौसी देश आक्रमण करने की हिम्मत नहीं कर सके। राजकुमार ने लड़ाई जीती किन्तु हमारे सैनिक तो हताहत हुए ही। इस प्रकार राज्य को नुकसान तो उठाना ही पड़ा। जबकि तुम्हारे पुत्र के सेनापतित्व काल में कोई नुकसान नहीं हुआ। इसलिए उसे सेनापति बनाया।'

शिव शक्ति पांडव सेना के सेनापति 'शिवबाबा' भी कहते–"अपनी सर्वशक्तियां बढ़ाते रहो जिससे माया वार करने की हिम्मत न कर सके। माया पर योगबल से ही विजय पाई जा सकती है।" योगबल अर्थात पावरफुल संकल्प और पावरफुल दृष्टि। माया पर विजय प्राप्त करने के लिए वरदानस्वरूप भी बनना है। बाबा ने अब तक जो भी वरदान दिये हैं, यदि वह सदैव बुद्धि में रहें तो वरदानस्वरूप बन जाएंगे और माया पर विजय प्राप्त हो जाएगी। वरदानस्वरूप होंगे तो बाबा की मदद स्वतः मिलेगी। अब हम आगे बढ़ते जा रहे हैं–इसकी चेकिंग कैसे करें? यदि हमारा योग यथार्थ होगा तो प्राप्ति भी यथार्थ होगी।

बाबा ने हमें राजयोग सिखाया है, वह है सहज योग तो हमारा योग भी सहज होना चाहिए, मेहनत अनुभव न हो। वैसे देखें तो योग के भी दो पहलू हैं–'आत्माभिमानी' और 'परमात्माभिमानी।' जब हम आत्माभिमानी होते हैं तो विभिन्न प्रकार की विचार-धाराएं चलती हैं। बाबा हमेशा कहते –'बच्चे, आत्माभिमानी बनो'। क्यों कहते? क्योंकि हम सम्पूर्ण आत्माभिमानी नहीं बने हैं। मैं ज्योतिस्वरूप हूं–इस स्थिति में ही स्थित होने पर ज्ञान, शक्ति, शांति, प्रेम का गहन अनुभव (Deep Realization) होगा। अब इसके साथ सोचना है–मैं ज्योतिस्वरूप हूं। लेकिन किस किस्म (type) का ? जैसे परमात्मा ज्योतिस्वरूप है, वैसे मैं भी ज्योतिस्वरूप हूं, लाईटस्वरूप हूं। तो डबल लाइटस्वरूप (double light) बन जाएंगे और वह क्षण होगा अतिआनन्दमय। इस प्रकार सम्पूर्ण आत्मिक स्थिति में ही परमात्मा से पूर्ण सम्बन्ध (Connection) हो सकेगा, तब परमानन्द की अनुभूति होगी।

अब इस परमानन्द को पाने के लिए निरन्तर आत्मिक

स्थिति को कैसे प्राप्त करें? सबसे पहले हमें आत्मिक स्थिति में टिकना होगा। आत्मिक स्मृति में कैसे टिकें? इसके लिए यह संकल्प नहीं करना है– 'मैं आत्मा हूं, देह नहीं'। देह को तो भूलना है, तो देह को किसी भी प्रकार से याद नहीं करना है। फिर मैं आत्मा हूं–कहने से कभी बुद्धि आगे नहीं जाती। पहले याद आता –आत्मा कहां है? इस देह में भृकुटि के मध्य में। तो बुद्धि हद में ही जाती, बेहद में नहीं। यदि हम अपने को ज्योतिस्वरूप समझें तो बुद्धि ज्योति के देश में जाती जहां लाल प्रकाश है, परमात्मा सबसे ऊपर दिव्यरूप से चमक रहा है। इस प्रकार बुद्धि हद से निकल बेहद में चली जाती है। अब हम आत्मिक स्थिति में स्थित हो जाते । इस अभ्यास से हमारी दृष्टि आत्मिक बनती। इस आत्मिक दृष्टि पर निरन्तर अटेन्शन देंगे, तभी हमारी वृत्ति आत्मिक होगी। जब हमारी वृति आत्मिक होगी, तभी हमारे संस्कार बदलेंगे। जब तक वृति आत्मिक नहीं होगी तब तक संस्कार दब जाएंगे, समाप्त नहीं होंगे।

इसके लिए एकाग्रता चाहिए। जिस प्रकार कागज़ यदि साल भर भी सूर्य की धूप में रखा जाए तो जलेगा नहीं लेकिन लैंस से यदि किरणों को एकाग्र करें तो दो सेकण्ड में कागज़ जल जाता है। इसी तरह विकर्म भी विनाश तब तक नहीं होंगे जब तक बुद्धियोग केवल एक बाबा की तरफ न हो। केवल एक बाबा की याद आए। अब हमको चैक करना है–हम किस स्थिति में हैं? दूसरों को तो कहते हैं कि अब नहीं तो कब नहीं! हमारी आत्मिक स्थिति साधारण है, मध्यम है, उच्च है या उच्चतम है? आत्मिक स्थिति उच्चतम होगी तभी परमात्माभिमानी बन सकेंगे। जो परमात्माभिमानी होंगे उनको परमात्मा के गुण, कर्त्तव्य और महिमा का ही चिन्तन चलेगा। वह सिर्फ परमात्म-चिन्तन करेंगे। परमात्मा के हर कार्य को जिम्मेदारी के साथ करने को सदैव तत्पर रहेंगे व्यर्थ संकल्पों के द्वारा हमने अपनी आत्मिक शक्ति गंवार्य है। अब समर्थ संकल्पों के द्वारा उन्हें पुनः प्राप्त करना है। ज्ञान के मनन-चिन्तन और समर्थ संकल्प से हमार आदि-अनादि स्वरूप इमर्ज होता जायेगा और हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे।

**कुरुक्षेत्र**– भ्राता राजकुमार वर्मा, उपायुक्त को पवित्रता की प्रतीक राखी बांधते हुए ब्र० कु० सोनिया बहन।

**दिल्ली (शक्तिनगर)**– सेवाकेन्द्र पर बैंक-मैनेजर्स के लिये आयोजित 'क्रियेटिव वर्कशॉप' का दृश्य।

**आगरा**– सेवाकेन्द्र पर तीर्थराज आबू से पधारे ब्र०कु० दादा चन्द्रहास जी को सौगात भेंट करते हुए ब्र० कु० बिमला बहन।

**सोलापुर**– करमला में आयोजित 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी' के उद्घाटन समारोह में प्रवचन करते हुए ब्र० कु० सोमप्रभा बहन।

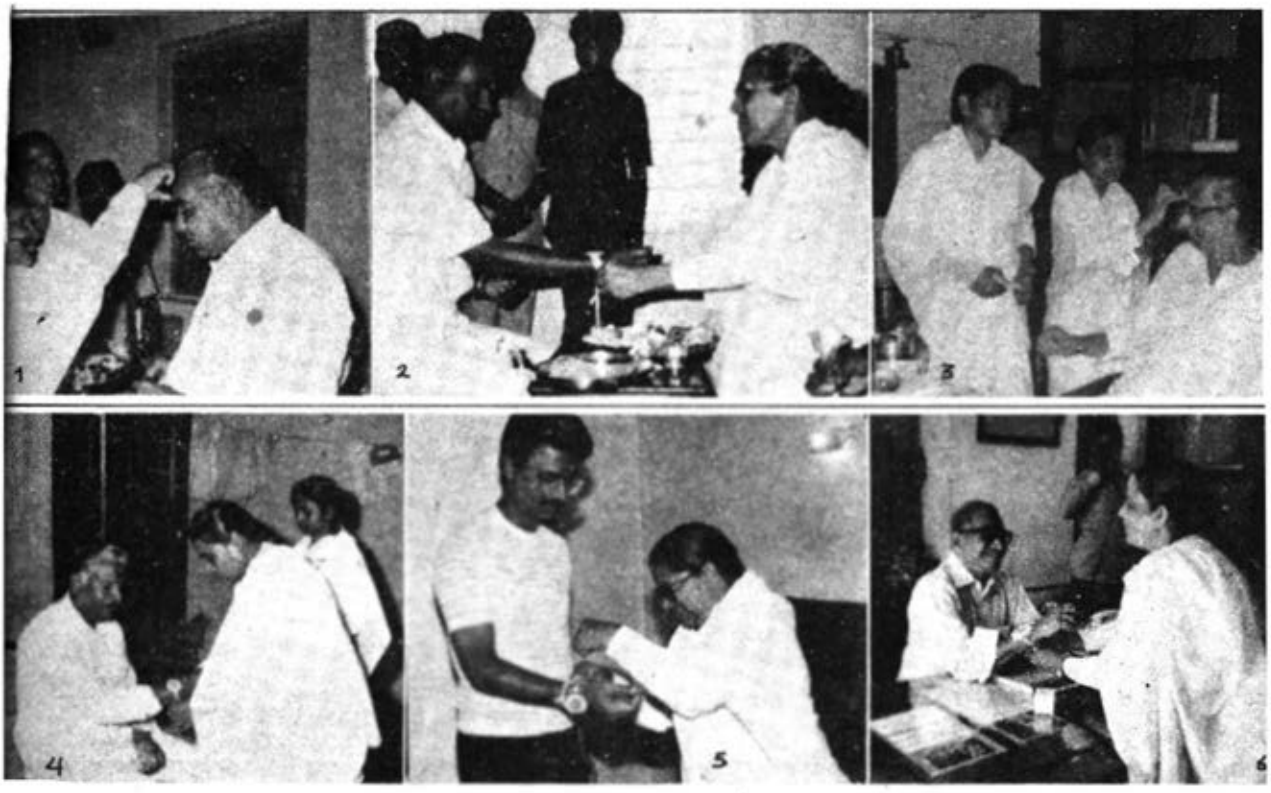

1 **बिलासपुर** – मध्य प्रदेश के लोक निर्माण मंत्री भ्राता बी० आर० यादव को राखी बांधकर उन्हें आत्म-स्मृति का तिलक लगाते हुए ब्र० कु० गीता

2 **बैंगलोर** – राखी पर्व पर आयोजित एक कार्यक्रम में प्रतिष्ठित व्यक्तियों को राखी बांधते हुए ब्र० कु० सरला बहन।

3 **राजरहाट (कलकत्ता)** – राखी पर्व पर पश्चिम बंगाल के जेल मंत्री भ्राता देवव्रत बन्दोपाध्याय को आत्म-स्मृति का तिलक लगाते हुए ब्र० कु० पुरवी बहन।

4 **सूरत** – भ्राता भूरूलाल पाटीदार, विधायक को स्नेह-सूचक राखी बांधते हुए ब्र० कु० किरण बहन।

5 **फरीदाबाद** – भ्राता रवि कान्त शर्मा, आई० पी० एस०, एस० एस० पी० को स्नेह की सूचक राखी बांधते हुए ब्र० कु० उषा बहन।

6 **कटक** – भ्राता इन्द्रमणि साह, उद्योगपति को पवित्रता की प्रतीक राखी बांधते हुए ब्र० कु० कुलदीप बहन।

## रक्षाबन्धन पर्व पर की गई सेवाओं का सचित्र समाचार

**नडियाड** – में आयोजित एक समारोह में भ्राता अमर सिंह, मंत्री (श्रम और सलाहकार), गुजरात राज्य अपने विचार व्यक्त करते हुए।

**उदयपुर –** लेखक संस्थान में वृक्षारोपण कार्यक्रम का शुभारम्भ करते हुए ब्र० कु० शीला बहन।

**लंदन –** गिलास्गो में नये 'राजयोग भवन' का उद्घाटन करने पश्चात् ब्र० कु० दादी जानकी जी, ब्र० कु० दादी कमलमणि जी, तथा अन्य शिव बाबा की याद में तल्लीन हैं।

**कुरुक्षेत्र –** उपमण्डल अधिकारी (सिविल) भ्राता बहादुर चन्द को राखी बांधते हुए ब्र० कु० सोनिया बहन।

**त्रिवेन्द्रम –** गीता-पाठशाला में उच्चतम न्यायालय के सेवानिवृत्त जज भ्राता वी०आर० कृष्णा अय्यर के आगमन पर उनको फूलों का गुलदस्ता भेंट किया जा रहा है।

**दिल्ली-शक्ति नगर –** रोटरी क्लब में ब्र०कु० चक्रधारी प्रवचन करते हुए।

**जबलपुर** – स्थानीय जेल में कैदियों को 'पवित्र बनो, योगी बनों' की सूचक राखी बांधते हुए ब्र० कु० बहन।

**जबलपुर** – मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायाधिपति भ्राता फैजानुद्दीन ब्र० बहन से पावनता की राखी बंधवाते हुए।

**रायपुर** – म० प्र० कांग्रेस (आई) अध्यक्ष एवं सांसद भ्राता चन्द लाल चन्द्राकर को राखी बांधने के पश्चात् उन्हें ईश्वरीय सन्देश देते हुए ब्र० कु० कमला बहन।

**देवीताल** – कुमायुं मण्डल के आयुक्त भ्राता ओमनारायण वैद जी को पवित्रता की प्रतीक राखी बांधते हुए ब्र० कु० दीदी बहन।

**भोपाल** – ईश्वरीय नगर झोपड़ी में झोपड़ियों के अध्यक्ष भ्राता ईश्वर चन्द जी को राखी बांधते हुए ब्र० कु० माधुरी बहन।

**कृष्णगिरि** – जिला न्यायाधीश भ्राता नटराजन जी को राखी बांधने के पश्चात् उन्हें श्री लक्ष्मी-श्री नारायण का चित्र भेंट करते हुए ब्र० कु० सरला बहन

**छतरपुर** – महाराजा डिग्री कालेज के प्रिंसिपल भ्राता बी० पी० पाण्डे जी को पवित्रता की प्रतीक राखी बांधते हुए ब्र० कु० शैला बहन।

**छतरपुर** – सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार भ्राता एम० एल० गुप्ता जी को 'स्नेही बनो, सहयोगी बनो' की सूचक राखी बांधते हुए ब्र० कु० शैला बहन।

**छतरपुर** – सहकारी बैंक के मैनेजर भ्राता बी० पी० मिश्र जी को स्नेह-सूचक राखी बांधते हुए ब्र० कु० शैला बहन।

**रायपुर** – आयुक्त भ्राता आर० पी० बगई को पावन राखी बांधते हुए ब्र० कु० किरण बहन।

**रायपुर** – भ्राता अशोक दास, जिलाधीश को 'स्नेही बनो, सहयोगी बनो' की प्रतीक राखी बांधते हुए ब्र० कु० किरण बहन।

**राँची** – विश्वविद्यालय के कुलपति भ्राता एस० पाटणकर को पावन राखी बांधते हुए ब्र० कु० निर्मला बहन।

1 रायबगान (कलकत्ता)– पूर्वांचल रेलवे के महाप्रबन्धक को स्नेह की सूचक राखी बांधते हुए ब्र० कु० विमला बहन।

2 रायबगान (कलकत्ता)– भ्राता मुकुल जी, डी० आई० जी० को पवित्रता की प्रतीक राखी बांधते हुए ब्र० कु० विमला बहन।

3 दिल्ली (कश्मीरी गेट)– भ्राता चमनलाल जी, रोटरी क्लब के अध्यक्ष भ्राता एम० एल० गलाटी तथा भ्राता मदन लाल जी को ईश्वरीय सौगात भेंट करते हुए ब्र० कु० नीला बहन।

4 दिल्ली (कश्मीरी गेट)– सेवाकेन्द्र पर भ्राता भीकूराम जैन तथा उनके बेटे को राखी स्नेह सूचक राखी बांधते हुए ब्र० कु० मीरा बहन।

5 सीहोर– स्थानीय जेल में कैदियों को राखी बांधने के पश्चात् जेलर साहब को राखी बांधते हुए ब्र० कु० सुनीता बहन।

6 रायबगान (कलकत्ता)– पश्चिम बंगाल के स्वास्थ्य मंत्री भ्राता प्रशान्त सूर जी को राखी बांधते हुए ब्र० कु० विमला बहन।

पुरी– सेवाकेन्द्र पर आयोजित 'स्नेह-मिलन' कार्यक्रम में उपस्थित सुप्रसिद्ध उद्योगपतिगण एवं व्यापारीगण एक ग्रुप फोटो में।

जगदीश चन्द्र हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र० कु० आत्म प्रकाश, सम्पादक, बी ९/१९ कृष्णानगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा ओम शान्ति प्रैस, कृष्णानगर, देहली-५१ से छपवाया Regd No. 10563/65-D. (E)—70